वास्तुशास्त्र सहायक

व्यावसायिक पाठ्यक्रम स्तर 3.0

राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा मान्यता प्राप्त

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - 456006 (म.प्र.)

Phone : (0734) 2502266, 2502254, E-mail : msrvvpujn@gmail.com, website - www.msrvvp.ac.in

वास्तुशास्त्र सहायक

प्रधान सम्पादक

प्रो. विरूपाक्ष वि. जड्डीपाल्

सचिव

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

लेखक

डॉ. गोविन्द् प्रसाद शर्मा, ज्योतिषाचार्य

एम०ए०, एम० फिल०, पी०एचडी०(शैक्षिक सहायक)

प्रधान संयोजक

डॉ.अनूप कुमार मिश्र

सहायक निदेशक, प्रकाशन एवं शोध अनुभाग

आवरण एवं सज्जा : श्री शैलेन्द्र डोडिया

तकनीकी सहयोग : डॉ. अभय कुमार पाण्डेय

© महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रिय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जयिनी

ISBN :

मूल्य :

संस्करण :2025

प्रकाशित प्रति PDF

प्रकाशक : महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रिय वेदविद्या प्रतिष्ठान

(शिक्षामन्त्रालय, भारत सरकार की स्वायत्तशासी संस्था)

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - 456006 (म.प्र.)

Email: msrvvpujn@gmail.com, Web: msrvvp.ac.in

दूरभाष (0734) 2502255, 2502254

भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की पाठ्यचर्या एवं राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन का उद्देश्य शिक्षण विकास एवं प्रशिक्षण के द्वारा शिक्षार्थियों का सर्वांगीण विकास कर रोजगार प्रदान करना है। महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान उज्जैन सदैव शैक्षिक नवाचार के क्षेत्र में अग्रसर रहा है अतः आदर्श वेद विद्यालयों, पाठशालाओं एवं भारत के विद्यालयों में वैदिक कौशल विकास शिक्षण एवं प्रशिक्षण के द्वारा अनेकानेक गतिविधियों के माध्यम से शिक्षार्थियों को रोजगार के अवसर प्रदान कर रहा है, जिससे शिक्षार्थी प्रशिक्षण के ज्ञानार्जन द्वारा स्वयं को अद्यतन एवं जागृत कर सकेंगे तथा इसके विषय ज्ञान का लाभ अपने दैनन्दिन जीवन के साथ-साथ आजीविका प्राप्त कर राष्ट्र निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगे।

वास्तुशास्त्र सहायक पाठ्यपुस्तक में इकाईयों के विषयों को विविध आयामों के साथ सहज एवं प्रभावी तरह से प्रस्तुत किया गया है लेकिन फिर भी **कोई दोष हों तो हमें सूचित अवश्य** करें क्योंकि हमारा परम उद्देश्य वैदिक सिद्धान्तों के आधार पर वेदांगों के ज्ञान को कौशल विकास के माध्यम से जन-जन पहुँचाना है। अतः पाठ्य पुस्तकों की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए विद्वानों के समस्त सुझावों का स्वागत है।

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन

प्राक्कथन

वेद सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान के स्रोत है। वास्तुशास्त्र का उद्गम वेदों से हुआ तथा पुराणों के समय पुष्पित – पल्लवित एवं विकास हुआ और वैदिक ऋषि-मुनियों की शोधों के फलस्वरूप वर्तमान में चौसठ विद्याओं में से वह एक विद्या वास्तुशास्त्र मनुष्यों का उपकार कर रहा है।

हे राजा! आप परस्पर द्रोह न करते हुए उत्तम स्थायी सहस्रों स्तम्भों वाले गृह में रहें। यथा-

राजानावनभिद्रुहा ध्रुवे सदस्युत्तमे। सहस्रस्थूण आसाते॥ (ऋ.2.41.5)

अथर्ववेद में वातानुकूलित गृह का उल्लेख है

हिमस्य त्वा जरायुणा शाले परि व्ययामसि।

शीतह्रदा हि नो भुवोऽग्निष्कृणोतु भेषजम् ॥ (अ.वे.6.106.3)

विद्वान शिल्पियों द्वारा मापित तथा निर्मित एवं ब्राह्मण पुरोहित के द्वारा आधार शिला रखी हुई शाला को बचाने वाले इन्द्र एवं अग्नि रक्षा करें और सोम औषधि प्रधान गृह की रक्षा कीजिए।

ब्रह्मणा शालां निमितां कविभिर्निमितां मिताम्।

इन्द्राग्नी रक्षतां शालाममृतौ सोम्यं सदः ॥ (अ.वे.9.3.19)

प्रत्येक मनुष्य का शरीर प्रकृति के पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु इन पाँच तत्त्वों से बना है, उसी प्रकार वास्त्रशास्त्र भी उन्हीं पाँच तत्त्वों का विधान है। जैसा कि तुलसीदास जी ने कहा है

छिति जल पावक गगन समीरा।

पञ्च रचित अति अधम सरीरा।।(रामचरितमानस चौ.1.4.11)

पृथ्वी, जल, तेज, वायु,आकाश। इन पञ्च महाभूतों से ही समस्त सृष्टि की संरचना हुई है। हमारे वैदिक ऋषियों ने पंचमहाभूतों के साथ प्रकृति को ध्यान में रखते हुए अपार्टमेंट (बहुमंजिला गृह) फ्लैट, बंग्ला, दुर्ग, सरकारी आवास, गृह, अतिथिशाला, सभागार नगर और लोककल्याणादि हेतु यज्ञादि के लिए नियमों, विधियों एवं प्रविधियों का निर्माण कर वास्तुविन्यास किया है।

अग्नि-भूमि-नभस्तोयवायवः क्रमतो द्विज।

भौमादीनां ग्रहाणां तु तत्त्वान्येतानि वै क्रमात्।।(बृ.पा.हो.ग्र. स्व.अ.21)

भवन की साज- सज्जा और ऊँचाई के विषय मे अथर्ववेद में कहा गया है कि सुन्दरता हेतु शाला के अन्दर जो छिक्के लगाएँ हैं, उन आपके छिक्कों को सुदृढ ग्रथित करते हैं, मान की रक्षा करने वाली

शाला! ऊँची निर्मित हुई वह हमारे शरीरों के लिए कल्याणकारिणी हो।

यानि तेऽन्तः शिक्या न्याबेधू रण्याय कम्।

प्र ते तानि चृतामसि शिवा मानस्य पत्नी न उद्धिता तन्वे भव ॥(अथर्व.9.3.6)

अथर्ववेद् में गृह कक्षा विन्यास का उल्लेख प्राप्त होता है पूजागृह, रसोईगृह, स्त्री गृह, पुरुषगृह, अतिथिगृह एवं गवादि गृह आदि विन्यासों की पृथक-पृथक व्यवस्था होनी चाहिए।

हविर्धानमग्निशालं पत्नीनां सदनं सदः।

सदो देवानामसि देवि शाले ॥ (अथर्व.9.3.7)

अथर्ववेद् में गृह के महत्त्व का वर्णन है कि हे सम्मान की रक्षा करनेवाली शाले! जो तुझमें निवास करता है और जिस गृहपति के द्वारा मानपूर्वक बनाई गई है, वे सब गृह के सदस्य पूर्ण वृद्धावस्था का व्यापन करनेवाले होते हुए जीवन यावन करें। **यस्त्वा शाले प्रतिगृह्णाति येन चासि मिता त्वम्।**

उभौ मानस्य पत्नि तौ जीवतां जरदष्टी ॥(अथर्व.9.3.9)

अनेक ग्रन्थों का सार ग्रहण करते हुए इस गन्थ का निर्माण किया है अतः वास्तुशास्त्र सहायक का यह ग्रन्थ छात्रों के लिए वास्तुशास्त्र प्रवेश के साथ- साथ प्रशिक्षण हेतु प्रथम इकाई में कौशल भारत मिशन एवं ज्योतिष शास्त्र सहायक की भूमिका का परिचय, द्वितीय इकाई में वास्तुशास्त्र के वैज्ञानिक सिद्धान्त एवं प्रभाव, तृतीय इकाई में सुखानुभूति के लिए भवनों का आन्तरिक विन्यास एवं दिशानुसार उनके फल, चतुर्थ इकाई में वास्तु योजना एवं भवन निर्माण हेतु वास्तुचक्रनिर्णय, पञ्चम इकाई में कायिक-वाचिक-मानसिक सुख हेतु दिशाओं पर वास्तुकला के प्रभाव का ज्ञान, षष्ठ इकाई निरोग रहने हेतु आवासीय वास्तु के अनुसार भवन निर्माण, सप्तम इकाई में भवन के अङ्गों का शुभाशुभ ज्ञान, अष्टम इकाई में गृह को पर्यावरण के अनुकूल रखने हेतु गृहोपकरण एवं सज्जा की सटीक योजना एवं नवम इकाई में गृहप्रवेश के लिए उचित काल एवं वास्तुशान्ति का परिचयादि वास्तुभेदों के ज्ञान में सुगम तथा अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा। **लेखक पाठ्यपुस्तक के त्रुटि सुधार हेतु प्रेषित सिद्धान्त एवं प्रायोगिक आलोचनात्मक समस्त सुझावों के लिए आपका कृतज्ञ होगा।**

डॉ. गोविन्द प्रसाद शर्मा

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ संख्या
इकाई 1 : कौशल भारत मिशन एवं पुरोहित सहायक की भूमिका का परिचय	**1-9**
1.1. राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन	1
1.2. राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन के उद्देश्य	1
1.3. कौशल विकास और उद्यमशीलता मन्त्रालय	1
1.4. मंत्रालय का उद्देश्य	2
1.5. एनएसडीए की स्थापना	2
1.6. राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद(एनसीवीईटी)	3
1.7. एनसीवीईटी की विशेषताएँ	3
1.8. राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण परिषद (एनसीवीईटी) के उद्देश्य	3-7
1.9. एनसीवीईटी के मुख्य कार्य	8
1.10. वास्तुशास्त्र सहायक की भूमिका का परिचय	8-9
इकाईः2 वास्तुशास्त्र के वैज्ञानिक सिद्धान्त	**10-17**
2.1वास्तुशास्त्र के ग्रह	12
2.2वास्तुशास्त्र के अधिपति एवं दिशाएँ	12
2.3वास्तुशास्त्र के तत्त्व एवं ऋतुओं के साथ सम्बन्ध	12-13
2.4तत्व एवं ग्रह प्रधान व्यक्ति के आधार पर रंग चयन	14
2.5नगर एवं ग्राम में वास विचार	15-17
इकाईः 3 गर्भविन्यास विचार	**18**
3.1वास्तुदेव के मर्मस्थान एवं महामर्म स्थान	18-19
3.2 शल्यज्ञान	20
3.3 स्तम्भस्थापन एवं वेधविचार	21

3.4 भवनों का आन्तरिक विन्यास एवं दिशानुसार उनके फल 22-23

इकाईः 4 वास्तुचक्रनिर्णय 24-32

4.1 एकाशीतिपदवास्तु 24-26

4.2 वास्तुनर के अङ्गप्रविभाग 26-28

4.3 वृषवास्तु 28-29

4.4 चतुःषष्टीवास्तु 29-30

4.5 शत्पदवास्तु- 31

4.6 राशियों द्वारा वास्तु ज्ञान 32

इकाईः 5 वास्तुकला का प्रभाव 33-35

5.1ईशानकोण 33

5.2 आग्नेय कोण 33

5.3 नैर्ऋत्यकोण और वायव्य कोणों को बन्द करने के परिणाम 33

5.4 वायव्य कोण को बन्द करने के परिणाम 33

5.5 भूखण्ड की आकृति तथा उनके फल 33-34

5.6 आवासीय कक्षों का आकार 35

इकाईः 6 आधुनिक आवासीय वास्तु 36-

6.1अपार्टमेंट(बहुमंजिला गृह) फ्लैट 36-42

6.2बंग्ला, सरकारी आवास 42-49

6.3अतिथिशाला सभागार 49

6.4मार्ग के अनुसार भूखण्ड विचार 50

इकाईः 7 भवन विन्यास वास्तु 51-71

7.1द्वारनिर्माण 53-58

7.2आंगन	58- 61
7.3पूजाकक्ष	62
7.4प्रसाधन कक्ष (स्नानगृह)	62
7.5धनकक्ष	63
7.6भण्डारकक्ष	63
7.7धान्य कक्ष	63
7.8वराण्डा	63
7.9दूधादि द्रव	64
7.10 शौचालय	64
7.11 सेप्टिक टैंक	64
7.12 अध्ययनकक्ष	64
7.13 पाकशाला	64
7.14 दाम्पत्य कक्ष	64
7.15 भोजनकक्ष	65
7.16 शयनकक्ष	66-67
7.17 स्वागतकक्ष	66
7.18 पशुशाला	66
7.19 शस्त्रागार	66
7.20 आन्तरिक सज्जा	66
7.21 गैराज	67
7.22 सोपान विचार	68
7.23 बेसमेंट	69

7.24 नौकर कक्ष 69

7.25 सुरक्षा कक्ष 69

7.26 छत 69

इकाईः 8 गृहोपकरण एवं सज्जा 72-76

8.1उद्यानव्यवस्था 72-73

8.2आन्तरिक सज्जा 74

8.3विद्युत योजना एवं अन्य यन्त्र 74

8.4नलस्थान निर्णय 74

8.5नालीस्थान निर्णय तथा जल प्रवाह जलभण्डारण स्थान निर्णय 75

8.6खिड़कीस्थान निर्णय 75

8.7रोशनदाननिर्णय 76

8.8उपस्कर निर्णय 76

इकाईः 9 गृहप्रवेश 77-

9.1 नूतनगृहप्रवेश 78-81

9.2 जीर्णोद्धार गृहनिर्माण एवं गृहप्रवेश 81-82

9.3 गृहप्रवेश मुहूर्त्तविधान 82-87

9.4 वास्तुशान्ति 87

इकाई 1 : कौशल भारत मिशन एवं पुरोहित सहायक की भूमिका का परिचय

1.1. **राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन** – 15 जुलाई, 2015 को प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने राष्ट्रीय कौशलभारत मिशन का शुभारंभ किया। कुशल भारत, भारत सरकार की एक पहल है जो कौशल प्रशिक्षण के द्वारा देश के युवाओं का व्यक्तिगत विकास कर उनको सशक्त उद्यमी और अधिक उद्यमशील बनाकर उनका तथा देश के आर्थिक विकास को उन्नत करके कुशल भारत और समृद्ध भारत बनाने के लिए शुरू किया गया है। राष्ट्रीय कौशल मिशन के अध्यक्ष माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी हैं।

भारत की 65% युवा आबादी को कौशल विकास के माध्यम से उद्यमशील बनाकर देश को एक वैश्विक शक्ति बना सकते हैं। अतः कुशल भारत सम्पूर्ण देश के 40 क्षेत्रों में पाठ्यक्रम प्रदान करता है जो राष्ट्रीय कौशल अर्हता मानक के तहत उद्योग और सरकार दोनों द्वारा मान्यता प्राप्त मानकों सहित हैं। यह पाठ्यक्रम एक शिक्षार्थी को कार्य के व्यावहारिक समन्वय के साथ-साथ उसको तकनीकी रूप से उद्यम करने में सक्षम बनाता है।

1.2. राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन के उद्देश्य

- कौशल विकास का उद्देश्य युवाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण के द्वारा आजीविका प्रदान करना है।
- यह कौशल औपचारिक शिक्षा के साथ कौशल प्रशिक्षण के द्वारा उद्यमिता क्षमता में गुणवत्तापूर्ण परिणाम लाता है।
- कौशल विकास राष्ट्रीय मानकों के तहत प्रौद्योगिकी के माध्यम से कार्य क्षमता को बढ़ाना है।
- युवाओं का व्यक्तिगत विकास के साथ- साथ देश की आर्थिक वृद्धि को शिखर पर ले जाना है।

1.3. कौशल विकास और उद्यमशीलता मन्त्रालय-

कौशल विकास के द्वारा युवाओं की आजीविका क्षमता को बढ़ाने हेतु केन्द्र सरकार ने कौशल विकास एवं उद्यमशीलता मंत्रालय (एमएसडीई) का 26 मई 2014 को गठन किया। यह मन्त्रालय कौशल विकास के समस्त प्रयासों का समन्वय करने, कुशल जनशक्ति की मांग और आपूर्ति के बीच के अन्तर को दूर करने, व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण ढांचे का निर्माण करने, कौशल उन्नयन करने, न केवल मौजूदा रोजगारों हेतु, बल्कि सृजित की जाने वाली नौकरियों के लिए भी नए-नए कौशलों का

निर्माण करने के लिए अहर्निशम प्रयासरत है।

1.4. **मंत्रालय का उद्देश्य**- 'कुशल भारत' के दृष्टिकोण के लक्ष्यों को प्राप्त करने और उच्च मानकों के साथ बड़े पैमाने पर कुशल बनाना है। इन पहलों में इसकी सहायता करने के लिए निम्न संस्थाएँ कार्यरत हैं - प्रशिक्षण महानिदेशालय (डीजीटी), राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद (एनसीवीईटी), राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (एनएसडीसी), राष्ट्रीय कौशल विकास निधि (एनएसडीएफ़) और 37 क्षेत्र कौशल परिषदें (एसएससी) के साथ-साथ 33 राष्ट्रीय कौशल प्रशिक्षण संस्थान [एनएसटीआई/एनएसटीआई (महिला)], डीजीटी के अंतर्गत लगभग 15000 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान (आईटीआई) और एनएसडीसी के साथ 187 प्रशिक्षण भागीदार पंजीकृत हैं। मंत्रालय ने कौशल विकास केंद्रों, विश्वविद्यालयों और इस क्षेत्र के अन्य गठबन्धनों के साथ कार्य कर रहा है। इनके अतिरिक्त, संबंधित केंद्रीय मन्त्रालयों, राज्य सरकारों, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों, उद्योग एवं गैर-सरकारी संगठनों के साथ कौशल विकास को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए कार्य कर रहा है तथा देश के कार्यबल को पुन: सुदृढ और सक्रिय कर रहे हैं; तथा युवाओं को घरेलु उद्यमों से लेकर अंतरराष्ट्रीय रोजगार और विकास के हेतु तैयार कर रहें हैं।

1.5 एनएसडीए की स्थापना- जून 2013 में सरकार और निजी क्षेत्र के कौशल विकास प्रयासों में समन्वय एवं सामंजस्य स्थापित करने तथा राष्ट्रीय कौशल योग्यता ढांचे (एनएसक्यूएफ) को संचालित करने के लिए की गई थी, जिससे कि यह सुनिश्चित किया जा सके कि गुणवत्ता और मानक क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। इसके अतिरिक्त एकल एकीकृत योग्यता-आधारित ढांचे को अधिसूचित किया गया, राष्ट्रीय कौशल योग्यता ढांचे (एनएसक्यूएफ) को 27 दिसंबर 2013 को अधिसूचित किया गया। परन्तु इनमें अनेक हितधारक विभिन्न मानकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहे थे, जिनमें मूल्यांकन और प्रमाणन प्रणालियों की बहुलता थी, जो तुलनीय नहीं थे, तथा इससे व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रणाली पर गंभीर प्रभाव पड़ रहा था, तथा इस प्रकार देश के युवाओं की रोजगार क्षमता पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा था। व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रणाली और देश के युवाओं की रोजगार क्षमता पर भी प्रतिकूल प्रभाव न पड़े इसलिए राष्ट्रीय व्यावसायिक प्रशिक्षण परिषद (एनसीवीटी) की स्थापना हुई। जो 1956 के एक प्रस्ताव के माध्यम से औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों (आईटीआई)

को विनियमित करने के लिए की गई थी, जो दीर्घकालिक प्रशिक्षण प्रदान करते हैं। अल्पकालिक कौशल पारिस्थितिकी तंत्र को राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (एनएसडीसी), सेक्टर कौशल परिषदों (एसएससी), कौशल विकास मंत्रालय और अन्य कौशल मंत्रालयों के माध्यम से विनियमित किया गया।

1.6राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद(एनसीवीईटी) - राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद की स्थापना भारत सरकार द्वारा 05 दिसंबर, 2018 के माध्यम से पूर्ववर्ती राष्ट्रीय कौशल विकास एजेंसी (एनएसडीए) और राष्ट्रीय व्यावसायिक प्रशिक्षण परिषद (एनसीवीटी) के कार्यों एवं जिम्मेदारियों को समाहित करके एक नियामक निकाय के रूप में की गई है और इसे 1 अगस्त 2020 से प्रारंभ कर मानकों को स्थापित करने, व्यापक नियमों को विकसित करने और व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल पारिस्थितिकी संस्थाओं, मूल्यांकन एजेंसियों और कौशल सूचना प्रदाताओं को मान्यता देने और उनके कामकाज की निगरानी करना है।

यह एक व्यापक राष्ट्रीय विनियामक के रूप में कार्य करता है, जिसका कार्य व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण एवं कौशल (वीईटीएस) पारिस्थितिकी तन्त्र के लिए मानक स्थापित करना तथा व्यापक विनियम एवं दिशानिर्देश तैयार करना है, साथ ही सभी स्तरों पर शैक्षणिक शिक्षा में इसके एकीकरण को सुनिश्चित करना है। इसकी भूमिका मजबूत उद्यमिता सहभागिता सुनिश्चित करना तथा गुणवत्ता बढ़ाने और उच्च परिणाम प्राप्त करने के उद्देश्य से बहु-स्तरीय विनियमों को लागू करना है।

राजपत्र अधिसूचना के अनुसार 5 दिसंबर, 2018 राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण परिषद के रूप में गठित परिषद का नेतृत्व अध्यक्ष करता है और इसमें अध्यक्ष के अतिरिक्त, दो (2) कार्यकारी सदस्य, तीन (3) गैर-कार्यकारी सदस्य और एक (1) मनोनीत सदस्य होता है। इन सदस्यों का चयन कैबिनेट सचिव की अध्यक्षता वाली खोजसह चयन समिति की सिफारिशों के आधार पर किया जाता है, यही आम सभा में भी शामिल होते है, जिसकी अध्यक्षता कौशल विकास एवं उद्यमिता मंत्रालय (एमएसडीई) के मंत्री करते हैं और एनसीवीईटी को समग्र मार्गदर्शन प्रदान करने के लिए राज्यों और उद्योग के प्रतिनिधि शामिल होते हैं।

1.7 एनसीवीईटी की विशेषताएँ

- कौशल पारिस्थितिकी तंत्र में लगे निकायों के कामकाज के लिए एक समान मानक बनाने हेतु दिशानिर्देश तैयार करने तथा उनकी निगरानी और पर्यवेक्षण के लिए तंत्र विकसित करने के लिए एक एकल नियामक निकाय की आवश्यकता महसूस की गई, जिससे कौशल में गुणवत्ता सुनिश्चित हो सके।
- खंडित विनियामक प्रणाली को एकीकृत करना और व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल मूल्य श्रृंखला में गुणवत्ता आश्वासन को शामिल करना है। इस दृष्टिकोण का उद्देश्य उच्च-स्तरीय कौशल वाले कार्यबल का निर्माण करना, रोजगार क्षमता में सुधार करना और भारतीय अर्थव्यवस्था के तेज़ विकास में योगदान देना और भारत को दुनिया की कौशल राजधानी बनाना है। एनसीवीईटी यह सुनिश्चित करने के लक्ष्य के साथ काम करता है कि भारत में व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल (वीईटीएस) उच्च गुणवत्ता वाले हों, उद्योग की ज़रूरतों को पूरा करें और सभी के लिए सुलभ हों।
- सहायक विनियामक ढाँचा स्थापित करने के अलावा, एनसीवीईटी ने अपने अधिकार क्षेत्र में विभिन्न दिशा-निर्देश और नीतियाँ तैयार और अधिसूचित की हैं। इनमें व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल (VETS) मूल्य श्रृंखला में आवश्यक प्रक्रियाएँ और हितधारक शामिल हैं, जिनका उद्देश्य गुणवत्ता को बनाए रखना है। इन पहलों का उद्देश्य व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल ढाँचों और प्रक्रियाओं के लचीलेपन को बढ़ाना, उद्योग और व्यापक कौशल पारिस्थितिकी तंत्र की उभरती ज़रूरतों को पूरा करने के लिए उनकी प्रभावशीलता और दक्षता को बढ़ाना है, साथ ही राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और राष्ट्रीय ऋण ढाँचे (NCF) के अनुरूप सरकार के व्यापक दृष्टिकोण में योगदान देना है।

1.8 राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण परिषद (एनसीवीईटी) के उद्देश्य-

- माननीय प्रधानमंत्री के विजन के साथ संरेखित करना।
- व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण में उत्कृष्टता और नवीनता सुनिश्चित करके भविष्य के कार्यबल को सशक्त बनाना है, जिससे कि व्यक्ति अपनी पूर्ण क्षमता प्राप्त कर सकें और वैश्विक अर्थव्यवस्था की गतिशील आवश्यकताओं को पूरा कर सकें।

- व्यावसायिक प्रशिक्षण और शिक्षा के लिए मजबूत मानकों और गुणवत्ता ढांचे की स्थापना और क्रियान्वयन करके भारत में एक सुसंगत, सुसंगत और एकीकृत कौशल विकास पारिस्थितिकी तंत्र बनाना है, ताकि देश में संपूर्ण व्यावसायिक शिक्षा प्रशिक्षण और कौशल (वीईटीएस) प्रणाली और मूल्य श्रृंखला में स्थिरता, जवाबदेही और उत्कृष्टता सुनिश्चित की जा सके और बेहतर परिणाम प्राप्त किए जा सकें और भारत को 'विश्व की कौशल राजधानी' बनाया जा सके।
- सशक्तिकरण, परिवर्तन, उत्कृष्टता और नवाचार पर जोर देता है, कौशल बढ़ाने, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने और उद्योग की आवश्यकताओं को पूरा करने के लक्ष्यों के साथ संरेखित करता है, जो उद्योग की जरूरतों के अनुरूप कार्यबल को प्रशिक्षित करके उद्योग की आवश्यकताओं को पूरा करता है, जिससे कार्यबल की रोजगार क्षमता में सुधार होता है और देश के आर्थिक विकास में योगदान मिलता है। यह वैश्विक नौकरी बाजार के लिए व्यक्तियों को तैयार करने के महत्व पर भी प्रकाश डालता है, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय रोजगार प्रवृत्तियों और जरूरतों को संबोधित करता है।
- व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण के क्षेत्र में मान्यता, विनियमन और निगरानी के लिए गतिशील, गुणवत्ता-केंद्रित प्रणालियाँ स्थापित करना है।
- सम्पूर्ण देश में उच्च गुणवत्ता वाली व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल प्रदान करना। यह सुनिश्चित करता है कि बुनियादी ढांचा, प्रशिक्षक, पाठ्यक्रम और सामग्री उद्योग की मांगों को पूरा करती है।
- आजीवन सीखने के अवसर पैदा करना, व्यक्तियों को रोजगार और उद्यमिता के लिए आवश्यक कौशल और योग्यता प्रदान करना।
- प्रशिक्षण, मूल्यांकन और प्रमाणन के लिए मानक और दिशा-निर्देश निर्धारित करने, व्यावसायिक शिक्षा को उद्योग की जरूरतों के साथ जोड़ने और निरंतर और आजीवन सीखने और कौशल विकास को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है।
- उद्योग और अर्थव्यवस्था की उभरती जरूरतों के लिए प्रासंगिकता बनाए रखना और इसकी रणनीति को रेखांकित करता है।

- भारत को "विश्व की कौशल राजधानी" के रूप में स्थापित करने के लिए, युवाओं को वैश्विक रूप से मानक कौशल से लैस करने पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। यह पहल पूर्ण जनसांख्यिकीय लाभांश की प्राप्ति और 'आत्मनिर्भर भारत' के क्रियान्वयन का समर्थन करती है।
- वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मकता: सभी स्तरों पर वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धी कुशल कार्यबल का विकास करना, वर्तमान और भविष्य की कौशल आवश्यकताओं और वैश्विक कार्यबल की आवश्यकताओं को संबोधित करते हुए कौशल भारत पहल के तहत राष्ट्रीय कौशल योग्यता फ्रेमवर्क (एनएसक्यूएफ) के साथ व्यावसायिक और कौशल शिक्षा को संरेखित करना।
- गतिशील संरेखण: उभरते उद्योग की जरूरतों को पूरा करने के लिए एनएसक्यूएफ को समायोजित करना, युवाओं को सशक्त बनाना और कौशल, अपस्किलिंग, री-स्किलिंग और पूर्व शिक्षण की मान्यता (आरपीएल) के माध्यम से कार्यबल उत्पादकता को बढ़ाना।
- आकांक्षी व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण (VET) को एक सम्मानित, आजीवन कैरियर विकल्प के रूप में आगे बढ़ाना, तथा इसे मुख्यधारा की शिक्षा के साथ एकीकृत करना, ताकि व्यावसायिक प्रशिक्षण के साथ जुड़ी सामाजिक पदानुक्रम को समाप्त किया जा सके।
- आकांक्षी व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण (VET) को एक सम्मानित, आजीवन कैरियर विकल्प के रूप में आगे बढ़ाना, तथा इसे मुख्यधारा की शिक्षा के साथ एकीकृत करना, ताकि व्यावसायिक प्रशिक्षण के साथ जुड़ी सामाजिक पदानुक्रम को समाप्त किया जा सके।
- एकीकृत शिक्षा प्रणाली: व्यावसायिक शिक्षा प्रणाली (वीईटीएस) को स्कूल, उच्च, तकनीकी और विश्वविद्यालय शिक्षा के साथ मिलाना।
- क्षैतिज और ऊर्ध्वाधर गतिशीलता, जिससे कई प्रवेश और निकास बिंदु सक्षम होते हैं। विश्लेषण, मूल्यांकन, संश्लेषण, रचनात्मकता, आलोचनात्मक सोच, समस्या समाधान और नवाचार जैसे उन्नत कौशल पर विशेष जोर देंना।
- राष्ट्रीय ऋण ढांचा: व्यावसायिक और सामान्य शिक्षा क्षेत्रों के बीच प्रशिक्षुओं की गतिशीलता में सुधार करने के लिए एक मजबूत राष्ट्रीय ऋण ढांचा विकसित और कार्यान्वित करना।
- परिणाम-केंद्रित कौशल से रोजगार, स्वरोजगार, उद्यमशीलता और विदेश में नौकरी के अवसरों को बढ़ावा देता है।

- कौशल प्रणाली की अखंडता, पारदर्शिता और दक्षता सुनिश्चित करने, स्वायत्तता, सुशासन और सशक्तिकरण के माध्यम से नवाचार और रचनात्मक समाधान को बढ़ावा देने के लिए एक "हल्का लेकिन सख्त" नियामक ढांचा लागू करना।
- उद्योग और कौशल परिवेश की गतिशील आवश्यकताओं के अनुरूप उनकी प्रभावकारिता और अनुकूलनशीलता को बढ़ाने के लिए कौशल रूपरेखा और प्रक्रियाओं में सुधार करना।
- बहु-कौशल और अंतर-क्षेत्रीय कौशल को बढ़ावा देने के लिए उद्योग 4.0 सहित उभरती प्रौद्योगिकियों और भविष्य के कौशल में कौशल की पहचान करना और सुविधा प्रदान करना, कार्यबल की रोजगार क्षमता और कमाई की क्षमता में सुधार के लिए अंतर्राष्ट्रीय नौकरी बाजारों के साथ संरेखित करना।
- पारंपरिक कौशल के द्वारा योग्यताएँ, राष्ट्रीय व्यावसायिक मानक (एनओएस) और माइक्रो-क्रेडेंशियल्स (एमसी) विकसित करना, जो क्षेत्रीय योग्यता ढांचे के साथ-साथ विरासत ज्ञान और पारंपरिक भारतीय कौशल, जैसे हस्तशिल्प और हथकरघा को शामिल करते हैं।
- मिश्रित शिक्षा, कौशल और मूल्यांकन के तरीकों को बढ़ावा देना
- जहां संभव हो, पहुँच का विस्तार करना, लागत कम करना, सीखने के संसाधनों को मानकीकृत करना, और तेजी से और प्रभावी व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण वितरण के लिए उच्च गुणवत्ता वाली ई-सामग्री सुनिश्चित करना एनसीवीईटी भारत में व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल पारिस्थितिकी तंत्र के विकास और गुणात्मक सुधार के लिए एक सक्षम नियामक वातावरण बनाना।

1.9. एनसीवीईटी के मुख्य कार्य --

- मूल्यांकन एजेंसियों (एए) और कौशल सम्बन्धित सूचना प्रदाताओं (एसआईपी) को मान्यता देना, अनुशासन सुनिश्चित करना और उनका विनियमन करना।
- राष्ट्रीय कौशल योग्यता ढांचे (एनएसक्यूएफ) को स्थापित करना, एम योग्यता रजिस्टर (एनक्यूआर) को बनाए रखना

- एनएसक्यूएफ संरेखित योग्यता और राष्ट्रीय व्यावसायिक मानकों और माइक्रो क्रेडेंशियल्स (एमसी) का अनुमोदन, जो कि सेक काउंसिल (एसएससी) सहित पुरस्कार देने वाली निकायों द्वारा विकसित करना।
- अनुसंधान एवं सूचना प्रसार और मान्यता प्राप्त संस्थाओं की निगरानी, मूल्यांकन और पर्यवेक्षण।
- एमएसडीई के परामर्श से बीओ मूल्यांकन एजेंसियों के रूप में कौशल विश्वविद्यालयों के लिए विनियम तथा दिशानिर्देश स्थापित करना।
- व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थानों के अप्रत्यक्ष विनियमन के लिए दिशानिर्देश स्थापित करना।
- विभिन्न हितधारकों की समस्याओं का निवारण।

1.9 **वास्तुशास्त्र सहायक की भूमिका का परिचय**

सामयिक परिस्थितियों के अनुरूप भवननिर्माण व्यवस्था बदल जाने तथा वास्तुशास्त्रीय भवननिर्माण व्यवस्था का अनुसरण नहीं करने के कारण नागरिकों के स्वास्थ्य पर अनेक दुष्प्रभाव पड़ते हैं अतः स्वास्थ्य, सुख और दैनिक जीवन की दृष्टि को ध्यान में रखकर यह आधार पाठ्यक्रम तैयार किया गया है, जहाँ छात्रों को समाज में काम करने का अनुभव मिलेगा। यह वास्तुशास्त्र उन्हें शास्त्रीय और समकालीन पहलुओं की विशाल और विस्तृत जानकारी देगा। छात्रों को **सहायक** के मूल कर्तव्यों को समझने में सहायता करने के लिए वास्तु के व्यावहारिक ज्ञान के साथ- साथ मूल सिद्धान्तों का ज्ञान भी कराया जाएगा।

पाठ्यक्रम के उद्देश्य-

- इस पाठ्यक्रम का मूल उद्देश्य अन्य विषयों के साथ-साथ कौशल विषय चुनने वाले 3.0 **लेवल** के छात्रों की रोजगार क्षमता और कौशल दक्षता विकसित करना हैं।
- आवासीय वास्तुशास्त्र लोगों के लिए व्यापार क्षेत्र में उन्नति के साथ- साथ दाम्पत्य जीवन और परिवार में आने वाली समस्याओं का समाधान भी करेगा।
- चतुःषष्टीवास्तु और एकाशीतिपद वास्तु के माध्यम से भवन निर्माण कराकर भौतिक सुविधाओं का आनन्द दिलाएगा।
- समाज को गुणवत्तापूर्ण सेवा प्रदान करने के लिए ज्योतिषी व वास्तुकार प्रशिक्षित करना।

- गृह निर्माण में प्रभावी समस्याओं तथा खतरों की पहचान करना और उनके प्रबंधन को समझना।
- वास्तुशास्त्र के नैदानिक कर्तव्यों को समझना, जिसमें महत्त्वपूर्ण मापदण्डों को लेना और रिकॉर्ड करना, वास्तु इतिहास, गृह की जाँच करना और वास्तुशास्त्र के द्वारा समाज को सुखी- समृद्ध बनाना है।

कैरियर के अवसर -

वास्तुशास्त्र का पाठ्यक्रम छात्रों को लोगों की माँग का विश्लेषण करेगा और समाज में शिक्षार्थियों को अच्छे से भूमि प्रबन्धन करना सिखाएगा। यह पाठ्यक्रम छात्रों को **वास्तुदेव के मर्मस्थान एवं महामर्म स्थान शल्यज्ञान, वेधविचार, सर्वतोभद्रमण्डल , वृषवास्तु, चतुःषष्टीवास्तु, एकाशीतिपदवास्तु, भवनों का आन्तरिक विन्यास और आधुनिक आवासीय वास्तु** आदि क्षेत्रों में काम करने की अनुमति देगा। यह पाठ्यक्रम छात्रों को उनके **वास्तुकार कैरियर** को प्रभावी ढंग से तैयार करने के विशेष उद्देश्य से तैयार किया गया है।

सक्रिय गतिशीलता-

इस पाठ्यक्रम में भाग लेकर छात्र आगे की शिक्षा को अद्यतन कर सकेंगे, विभिन्न संस्थाओं एवं विश्वविद्यालयों के ज्योतिष, वास्तु विभाग, समाज और बिल्डर के लिए सहायक होंगे।

इकाईः 2 वास्तुशास्त्र के वैज्ञानिक सिद्धान्त

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश पाँच तत्त्वों तथा पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण चारों दिशाएँ तथा नैर्ऋत्य, ईशान, वायव्य,अग्नि और ब्रह्म स्थान का उचित समायोजन ही वैज्ञानिक सिद्धान्त है।

पृथ्वी तत्त्व – वास्तुशास्त्र के सिद्धान्त पंचमहाभूतों के समायोजन पर निर्भर है और इन्हीं के कारण प्राणियों का जीवन पृथ्वी पर संभव हैं क्योंकि पृथ्वी के चुंबकीय एवं गुरुत्वाकर्षण बल का सभी जीव-जन्तुओं पर प्रभाव पड़ता है। वैज्ञानिक के अनुसार, वास्तुशास्त्र का सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व पृथ्वी की चुम्बकीय गुरुत्वाकर्षण शक्ति है, जिसके दो ध्रुव हैं, उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव। इसका दक्षिणी ध्रुव उत्तरी गोलार्ध में और उत्तरी ध्रुव दक्षिणी गोलार्ध में विद्यमान है, इसके दोनों ध्रुवों पर इलेक्ट्रो मैग्नेटिक फील्ड अधिक पाया जाता है। वास्तुशास्त्र में चुंबकीय सिद्धांतों के आधार पर ही गृह के सन्तुलन का समायोजन किया जाता है। अतएव भूखण्ड का चयन सर्वप्रथम किया जाता है और इस पर निर्मित भवन का मानव जीवन प्रतिक्षण प्रभाव पड़ता है। **गृह निर्माण में सबसे अधिक अंश** पृथ्वी तत्त्व का होता और अतः वास्तुशास्त्र में भू चयन को सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है क्योंकि इसमें वात, पित्त और कफ तीनों का अंश उपलब्ध होता है। यथा- एल्युमिनियम 8.1%, ऑक्सीजन 46.6%, सोडियम 2.8%, आयरन 5.0%, सिलिकॉन 27.7%, पोटैशियम 2.6%, कैल्शियम 3.6% एवं मैग्नीशियम 2.1% हैं जो पूरी पृथ्वी की सतह का लगभग 98 प्रतिशत अंश का निर्माण करते हैं और अन्य तत्त्व क्रमशः कम होते जाते हैं, इसका साक्षात् प्रभाव जीव-जन्तुओं के शरीर पर पड़ने के कारण रोग उत्पन्न होते हैं। अतः पृथ्वी तत्त्व को हमारे वेद भगवान् अथर्ववेद में माता माना गया है।

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः

जल तत्त्व- पृथ्वी की सतह पर उपलब्ध जल का वितरण सामान्यतः असमान है। ताजे जल

में सतह पर उपलब्ध जल का केवल 3% भाग होता है; शेष 97 प्रतिशत भाग समुद्र में है। स्वच्छ जल 69 प्रतिशत समय ग्लेशियरों में, 30 प्रतिशत समय भूमिगत और 1% से भी कम समय नदियों, झीलों और दलदलों में पाया जाता है। अर्थात् पृथ्वी की सतह पर केवल 1% जल ही मनुष्यों के उपयोग के योग्य है, जबकि 99 प्रतिशत भूमिगत है। जल तीन रूपों में उपलब्ध होता है अर्थात् ठोस, तरल और गैस। प्रत्येक जीव-जन्तुओं में 60% कफ का कारक जल तत्त्व पाया जाता है और इसकी न्यूनता या प्रदूषित जल के कारण 80% व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। यथा- मानसिक रोग, स्मरण शक्ति कमजोर होना, टाइफाइड, तेज़ ज्वर, थकान, मांसपेशियों में दर्द, अधिक पसीना आना, अधिक नींद आना, सुस्ती, भूख में कमी, सांस लेने में परेशानी, वज़न घटना, कब्ज, कॉलेरा, डिहाइड्रेशन, डायरिया,जी मिचलाना, उल्टी, पेट दर्द, पीलिया, हेपेटाइटिस, थकानादि।

वायु तत्त्व- वायु में नाइट्रोजन 78%, ऑक्सीजन 21%, कार्बन डाइऑक्साइड, अमोनिया, मीथेन, हाइड्रोजन, ओजोन, आर्गन, निऑन, हीलियम, क्रिप्टॉन, ज़ेनॉन और रेडॉन 1% विभिन्न गैसों का में मिश्रण होता है। वायु एक बहुत शक्तिशाली जीवन स्रोत है। वात दोष शरीर में वायु और अंतरिक्ष सम्बन्धित अनेक प्रक्रियायों का संतुलन स्थापित करता है। आयुर्वेद के अनुसार वायु(प्राण, अपान, उदान, समान, व्यान) पाचन अग्नि को सशक्त कर सिर, हृदय, पेट, वस्ति भाग को क्रियाशील बनाती है, सभी इन्द्रियों को प्रबंधित करती है और वायु त्वचा, रक्त प्रणाली और श्वसन के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर की सतह से सम्बन्धित है। आयुर्वेद के अनुसार वात अधिक होने पर हड्डियों में दर्द, अंगों का सुन्न होना, कब्जादि रोग होते हैं वही कम होने पर जी घबराना, उदर में गैस बनना एवं अपचादि रोग पीडित करते हैं। वास्तु के अनुसार, खिड़कियाँ और दरवाजे उचित दिशा में करने चाहिए ताकि सही मात्रा में हवा प्राप्त हो सके।

अग्नि तत्त्व- यह तत्त्व जीव-जन्तुओं के भोजन को जठराग्नि द्वारा पाचन क्रिया को उतेजित करता है और इस पित्त, ऊर्जा व मानव विकास का आधार की कारक अग्नि की कमी व अधिकता से अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

आकाश तत्त्व- यह जड़, चेतन, अचेतन आदि तत्त्वों को आश्रय प्रदान करता है। श्रवण

शक्ति का कारक तथा ऊर्जा स्रोतों का प्राथमिक संवाहक माना जाता है - भौतिक ऊर्जा, प्रकाश, मनोवैज्ञानिक, और संज्ञानात्मक ऊर्जा-चेतन मन, अवचेतन मन एवं अचेतन मन, इसे ब्रह्मा का स्थान माना जाता है।

ये पाँचों तत्त्व एक दूसरे पर निर्भर हैं।

2.1 **वास्तुशास्त्र के ग्रह-** अन्तरिक्ष में पूर्वाभिमुख गमन करते हुए तथा नक्षत्रों का भोग करते हुए जो ज्योतिर्बिम्ब दिखाई देते हैं, वे ग्रह कहलाते है।

सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु ये ग्रह कहलाते हैं। यथा-

अथ खेटा रविश्चन्द्रो मङ्गलश्च बुधस्तथा।

गुरुः शुक्रः शनी राहुः केतुश्चैते यथाक्रमम्।।(बृ.पा.हो.3.11)

2.2 **वास्तुशास्त्र के अधिपति एवं दिशाएँ-** भवन के निर्माण में दिशाओं एवं उनके स्वामी ग्रहों का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। अतः सुख-समृद्धि हेतु भवन की पूर्व योजना से लेकर ग्रहप्रवेश तक इनकी दिशाओं के अनुसार ही गृहविन्यास करना चाहिए।

- **पूर्व दिशा**- इस दिशा के स्वामी सूर्य ग्रह एवं देवता इन्द्र है।
- **आग्नेय कोण**- इस कोण के स्वामी शुक्र हैं एवं एवं देवता अग्निदेव हैं।
- **दक्षिण दिशा**- इस दिशा के मंगल ग्रह एवं इस दिशा के देवता यम हैं।
- **नैर्ऋत्य कोण**- इस कोण के स्वामी राहु और केतु ग्रह देवता राक्षश हैं।
- **पश्चिम दिशा**- इस दिशा के स्वामी शनि ग्रह एवं देवता वरुण देव हैं।
- **वायव्य कोण**- इस कोण स्वामी चन्द्र ग्रह तथा देवता वायु है।
- **उत्तर दिशा**- इस दिशा में बुध ग्रह है एवं धन के देवता कुबेर देव हैं।
- **ईशान कोण**- इस कोण के स्वामी बृहस्पति ग्रह है एवं भगवान शिव
- इस दिशा के देवता हैं।

2.3 वास्तुशास्त्र के तत्त्व एवं ऋतुओं के साथ सम्बन्ध- ग्रहों का पञ्च तत्त्वों से विशेष सम्बन्ध है।

तत्त्व	पृथ्वी/ Matter	जल/State of matter	अग्नि/ Energy	वायु/ Force	आकाश /Space

ग्रह	बुध	शुक्र, चन्द्र	सूर्य, मङ्गल	शनि	बृहस्पति

ऋतुज्ञान चक्र-

मेषादि दो-दो राशियों का भोगकाल ऋतु कहलाता है। इस प्रकार कालगणना में एक वर्ष को छः ऋतुओं में विभाजित किया गया है। शिशिरादि ऋतुएँ मकर राशि से प्रारम्भ होती हैं अर्थात् मकर-कुम्भ में सूर्य रहने पर शिशिर तथा मीन-मेष राशिमें वसन्त ऋतु। जैसा कि सूर्य सिद्धान्त(14.10) में कहा गया है - **"द्विराशिनाथा ऋतवस्ततोऽपि शिशिरादयः"** सौर गणना के अनुसार दो संक्रान्तियों तथा दो चान्द्र मासों की एक ऋतु होती है। यथा-

सूर्य एवं चान्द्र मास के अनुसार वसन्तादि ऋतु चक्र-

ऋतुएँ	वसन्त	ग्रीष्म	वर्षा	शरद	हेमंत	शिशिर
सौरमास	मीन,मेष	वृषभ, मिथुन	कर्क, सिंह	कन्या, तुला	वृश्चिक, धनु	मकर, कुंभ
चान्द्रमास	चैत्र	ज्येष्ठ	श्रावण	आश्विन	मार्गशीर्ष	माघ
मास	वैशाख	आषाढ	भाद्रपद	कार्तिक	पौष	फाल्गुन

पञ्च महाभूतों के अनुसार राशि वर्गीकरण- जन्मलग्न और जन्मराशि में स्थित राशि या ग्रह का जो तत्त्व हो उसके अनुसार जातक के शरीर, वाणी एवं मन पर प्रभाव पड़ता है। कफ दोष जल और पृथ्वी से सम्बन्ध रखता है, पित्त दोष से अग्नि और जल सम्बन्धित हैं और वात दोष शरीर में वायु और अंतरिक्ष तत्वों के संतुलन के समायोजन में सहायता करता है।

राशि	तत्त्व
मेष, सिह, धनु	अग्नि तत्त्व
वृष, कन्या, मकर	पृथ्वी तत्त्व
मिथुन, तुला, कुम्भ	वायु तत्त्व
कर्क, वृश्चिक, मीन	जल तत्त्व

पित्तादि धातु विचार एवं रोग ज्ञान

पित्त / Bile	वात/ Blown	कफ /Phlegm	मिश्रित /Mixed

मेष	वृष	कर्क	मिथुन
सिंह	कन्या	वृश्चिक	तुला
धनु	मकर	मीन	कुम्भ

- वास्तु के दक्षिण एवं नैर्ऋत्यकोण की दिशाएँ पृथ्वी तत्त्व से सम्बन्धित हैं, इसके रिक्त होने से विविध प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं।
- वास्तु का अग्निकोण अग्नि तत्त्व से सम्बन्धित हैं और इस कोण में अग्नि से सम्बन्धित निर्माण व यन्त्रों को लगाना चाहिए।
- वास्तु का वायव्यकोण वायु तत्त्व से सम्बन्धित हैं और इस कोण के असंतुलन से उपर्युक्त प्रकार के रोग होते हैं।
- वास्तु के उत्तर, पूर्व तथा भवन के मध्य ब्रह्म स्थान आकाश तत्त्व से सम्बन्धित हैं, इसको स्वच्छ एवं खुला नहीं रखनें पर अनेक रोगों की उत्त्पति होती है।
- वास्तु के उत्तर, पूर्व तथा ऐशान्य कोण की दिशाएँ जल तत्त्व से सम्बन्धित हैं, इसके असंतुलित होने से अनेकानेक रोग उत्पन्न हैं। अतः उत्तर एवं पूर्व में वास्तुशास्त्र के अनुसार निर्माण करना चाहिए।

2.4 **तत्त्व एवं ग्रह प्रधान व्यक्ति के आधार पर रंग चयन-** गृह का वर्ण वास्तुशास्त्र के अनुसार होना चाहिए क्योंकि यह वर्ण मानव को मनोबल देता है। जन्मराशि एवं राशिस्वामी का जो वर्ण होता है, वैसा ही उस मानव का स्वभाव होता है। अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि,वायु और आकाशादि पाँच तत्वों से शरीर निर्मित है, इसी प्रकार वास्तुशास्त्र है। तत्त्व एवं ग्रह प्रधान व्यक्ति के आधार पर रंग चयन करना चाहिए।

मेषादि राशियों के अनुसार वर्णविशेषः-

रक्तगौरशुककान्तिपाटलाः पाण्डुचित्ररुचिनीलकाञ्चनाः।

पिङ्गलः शबलबभ्रुपाण्डुरास्तुम्बुरादि भवनेषु कल्पिताः।।(जा.पा.1.23)

मेष का लाल ,वृष का श्वेत् , मिथुन का हरा ,कर्क का रक्तश्वेत, सिंह का,श्वेत कन्या का विविध वर्ण तुला का नील ,वृश्चिक का स्वर्णवर्ण पीला, मकर का पीतश्वेत युक्त, कुम्भ का नेवला के सदृश और

मीन का श्वेत वर्ण है।

2.5 **नगर एवं ग्राम में वास विचार-** ऋग्वेदादि वेदों में ग्रामों का उल्लेख है। ग्राम्रों की योजना सुसज्जित एवं पूर्वनियोजन पर आधारित थी।

ग्रामेष्वविता पुरोहितोऽस्ति यज्ञेषु मानुषः।।(ऋ.1.44.10)

यद्ग्रामे यदरण्ये यत् सभायां यदिन्द्रिये।।(य. 3.45.20)

शतपथ ब्राह्मण में वर्णन है कि ग्रामों का समय भी होता था। **स यद्राम्यैः संस्थापयेत् समध्वानः क्रामेयु समन्तिकं ग्रामयोग्रामान्तौ स्यातां नऽर्क्षीकाः पुरुषव्याघ्राः परिमोषिण.......................**।(13.2.4.2) इस प्रकार ग्रामों एवं नगरों का सन्निवेश, वेद, अर्थशास्त्र, महाभारत, रामायण, ब्राह्मण, हड़प्पा और मोहनजोदड़ो के पाण्डुलिपि आदि पुरातात्त्विक अंश उपलब्ध होते हैं।

यद् ग्रामभं द्वयंङ्कसुतेशकाष्ठा मितं भवेल्लाभमतः शुभेशः।

यद् भं शशाङ्काग्निनगाब्धितुल्यः मध्योऽष्टषट्कार्कमतो निषिद्धः॥ (वास्तुरत्नाकर पृ.4, श्लोक 22; वास्तुप्रदीप)

गृहस्वामी की जन्म राशि से यदि ग्राम की राशि दूसरी, नवमी, पाँचवीं, ग्यारहवीं तथा दसवीं स्थान पर हो, वह ग्राम नक्षत्र की दृष्टि से निवास शुभ होता है लेकिन पहली, तीसरी, सातवीं, चौथी, आठवी, छठीं और बारहवीं राशि वाला ग्राम अशुभ होता है।

गामे यत्र भवेद्दक्षे तदाद्याः सप्त मस्तके।

पृष्ठे च हृदये सप्त पादे सप्त स्वतारकाः।।

स्वनामराशेर्यद्राशिर्द्विशराङ्केशदिस्मितः।

स ग्रामः शुभः शुभदः प्रोक्तस्त्वशुभःस्यात्ततोऽन्यथा।। (बृ.वास्तुमाला 20)

गाँव के नाम नक्षत्र से गृह के स्वामी के जन्मनक्षत्र पर्यन्त गणना करने पर यदि 7 नक्षत्र मस्तक, 7नक्षत्र पीठ, सात नक्षत्र हृदय और सात नक्षत्र पादों पर समझें।

मस्तके च धनी मान्यः पृष्ठे हानिश्च निर्धनम्।

हृदये सुखसमप्राप्तिः पादे पर्यटनं फलम्।।

यदि गृहस्वामी का जन्म नक्षत्र मस्तक का हो धन व सम्मान, पीठ का हो धन हानि और निर्धन, हृदय पर हो तो सुख तथा पादों में हो तो पर्यटन की अधिकता रहती है।

ग्रामनामाक्षरं ग्राह्यं चतुर्भिर्गुणयेत्ततः।

नरनामाक्षरं योज्यं सप्तभिर्भागमाहरेत् ॥

1 पुत्रलाभो 2 धनप्राप्तिः 3 व्यय 4 आयुः क्रमेण च।

5 शत्रुनाशं 6 राज्यलाभं निश्शेपे मरणं ध्रुवम् ॥ (वा.र.13-14)

ग्राम नाम अक्षरों की संख्या को 4 से गुणा कर गृहस्वामी के नामाक्षरों की संख्या को उसमें जोड़कर 7 का भाग देने पर यदि 1 शेष रहे तो पुत्रलाभ, 2 शेष रहे तो धनलाभ, 3 शेष रहे तो व्यय, 4 शेष रहे तो आयु, 5 शेष रहे तो शत्रु का क्षय, 6 शेष आए तो राज्यलाभ और 7 शेष आए तो मृत्यु होती है।

जैसे - उज्जैन में अभय निवास करना चाहते हैं तो उज्जैन के 3अक्षरों को 4 से गुणा कर, अभय के 3 अक्षरों की संख्या को जोड़ने पर 3x4=12+3 = 15÷7=1, तो 1 शेष आया अतः उज्जैन में निवास करने से अभय को पुत्रलाभ होगा।

स्वनामराशितो ग्रामराशिर्द्व्यर्थाङ्केषुदिशिवैः

सम्मितश्चेत्तदा तस्य तद्ग्रामे वास उत्तमः॥

रोगोऽष्टद्वादशे तुर्ये वैरमाद्ये च सप्तमे।

हानिः षष्ठे तृतीये च ग्रामराशौ स्वनाममात् ॥(मु.ग.18,1-2)

जन्म नाम राशि से द्वितीय, पञ्चम, षष्ठ, दश, एकादश ग्राम की राशि हो तो उस ग्राम में वास करना उत्तम होता है। 4, 8, 12 वीं राशि ग्राम की हो तो रोग, 1, 7 वीं राशि ग्राम की हो तो वैर एवं 3, 6, राशि ग्राम की हो तो हानि समझना चाहिए।

इस प्रकार पूर्वाचार्यायों के अनुभव के आधार पर अपने ग्राम आवास का चयन कर लाभालाभ का अनुमान लगा सकते हैं।

ग्रामवास काकिणीविचार-

स्ववर्गं द्विगुणं कृत्वा परवर्गेण योजयेत् ।

अष्टभिश्च हरेद्भागं योऽधिकः स ऋणी भवेत् ॥23॥

अपने नाम की वर्गसंख्या को दुगिण कर दूसरे की वर्गसंख्या अर्थात् स्थान की संख्या को उसमें जोड़ दें। तदोपरान्त 8 का भाग देने से दोनों वर्गों में से जिसका शेष अधिक आए वह ऋणी होता है।

जैसे-उज्जैन में रोहित राव के नाम से काकिणी का विचार करना हो तो उज्जैन की वर्ग संख्या 3 को दोगुना कर रोहित राव की वर्गसंख्या जोड़ दिया तो 3 × 2=6 + 5 = 11, इसमें 8 का भाग देने से 1.3 शेष रहा। इसी प्रकार रोहित राव की वर्गसंख्या 5 को दोगुना करके उज्जैन की संख्या 3 जोड़ दिया तो 5 × 2=10 + 3 = 13 आया, इसमें 8 का भाग दिया तो 1.6 शेष रहा। अतः रोहित राव के उज्जैन में निवास करने पर रोहित राव उज्जैन का ऋणी रहेगा।

प्रश्न-

1. पूर्व दिशा का स्वामी ग्रह एवं देवता हैं।

(अ) सूर्य एवं देवता इन्द्र (ब) सूर्य एवं देवता इन्द्र

(स) चन्द्र एवं इन्द्र (अ) गुरु एवं देवता शिव

2. मीन-मेष राशि में सूर्य के गोचर करने पर कौनसी ऋतु होती है?

(अ) ग्रीष्म ऋतु (ब) हेमन्त ऋतु

(स) शरद ऋतु **(अ)** वसन्त ऋतु

रिक्तस्थान पूर्ति

1. वास्तु के उत्तर, पूर्व तथा भवन के मध्य ब्रह्म स्थान ....से सम्बन्धित हैं। **आकाश तत्त्व**/ जल तत्त्व
2. मेष, सिह व धनु राशियाँ .... से सम्बन्धित हैं। **अग्नि तत्त्व**/ वायु तत्त्व

सत्य / असत्य

1. गाँव के नाम नक्षत्र से गृह के स्वामी के जन्मनक्षत्र, पादों में हो तो पर्यटन की अधिकता रहती है। **सत्य** / असत्य

2. गृहस्वामी की जन्म राशि से यदि ग्राम की राशि दूसरी, नवमी, पाँचवीं, ग्यारहवीं तथा दसवीं स्थान पर हो, वह ग्राम में नक्षत्र की दृष्टि से निवास शुभ होता है **सत्य** / असत्य

इकाईः 3 गर्भविन्यास विचार-

भूमि पूजा के उपरान्त पदविन्यास की व्यवस्था की गई है, इसके लिए वर्गागार, आयताकार, वृत्ताकार और त्रिभुज का शुभाशुभ अनेकों प्रकार की आकृतियों का आचार्यों ने शिव, विष्णु, ब्रह्मादि देवों के साथ-साथ मानव एवं पशुओं के लिए गर्भ विन्यास के विधान का वर्णन किया है और इन पदों में देवों के स्थान को प्रदर्शित किया जाता है।

3.1 **वास्तुदेव के मर्मस्थान एवं महामर्म स्थान**- वास्तुपुरुष के मुख, हृदय, नाभि आदि स्थलों पर भीति एवं द्वारों के प्रभाव का वर्णन करेंगे-

सम्पाता वंशानां मध्यानि समानि यानि च पदानाम्।

मर्माणि तानि विन्द्यान्न तानि परिपीडयेत् प्राज्ञः।।(बृ.सं.53.57)

पदों के मध्य में वंश से वंश(कोण) सूत्रों का परस्पर जो सम्पात होता है, उसे 'मर्म स्थान' कहते हैं। बुद्धिमान् लोगों को उन मर्मस्थानों को पीड़ित नहीं करना चाहिए।

जैसा कि राजा भोज ने कहा है-

वंशानुवंशसम्पाताः पदध्यानि यानि च।

देवस्थानि तान्यद्ये पदषोडशकान्विते।।(स. सू.13.42)

तान्यशुचिभाण्डकीलस्तम्भाद्यैः पीडितानि शल्यैश्च ।

गृहभर्तुस्तत्तुल्ये पीडामङ्गे प्रयच्छन्ति ॥(बृ.सं. 53.58)

ये मर्मस्थान अपवित्र भाण्ड, कील, शंकु, खम्भा आदि एवं शस्त्रों से पीड़ित हों तो गृहस्वामी के भी उस अङ्ग में पीड़ा होती है, अर्थात् वास्तुपुरुष का जो मर्मस्थान पीडित होगा, गृहस्वामी के भी उस अङ्ग में पीड़ा होती है।

जैसा कि समराङ्गणसूत्रधार में वर्णन है-

चतुर्ष्वपि विभागेषु शिरा या स्युश्चतुर्दिशम्।

मर्माणि तानि चोक्तानि द्वारमध्यानि यानि च।।

भित्तिविस्तृतमध्येन यद्वा मध्येन दारुणः।

मर्म यत् पीड्यते येन गृहे तत्रोच्यते फलम्।।(23.10-11)

कण्डूयते यदङ्गं गृहभर्तुर्यत्र वाऽमराहुत्याम्।

अशुभं भवेन्निमित्तं विकृतेर्वाग्नेः सशल्यं तत् ॥ (बृ.सं. 53.59)

गृह का स्वामी हवन काल या प्रश्न के समय अपने जिस अङ्ग को खुजलाए, वास्तुपुरुष के उसी अङ्ग में शल्य होता है। अथवा अग्नि में आहुति देने के समय अशुभ निमित्त छींक, रुधन, अपान वायु-त्याग की आवाज आए या अग्नि में विकार दिखाई दे तो उस देवता के स्थान में शल्य समझना चाहिए।

अङ्गारे स्तेनभयं भस्मनि च विनिर्दिशेत्सदाऽग्निभयम्।

शल्यं हि मर्मसंस्थं सुवर्णरजताद्दतेऽत्यशुभम् ।।

मर्मण्यमर्मगो वा निरुणद्ध्यर्थागमं तुषसमूहः ।

अपि नागदन्तको मर्मसंस्थितो दोषकृद् भवति ॥ (बृ.सं. 53.60)

यहि वह शल्य काष्ठ का हो तो धनहानि, हड्डी का हो तो पशुपीड़ा और रोगभय, लोहे का हो तो शस्त्रभय, केश का हो तो मृत्यु, कोयले का हो तो चोरभय, भस्म का हो तो सदा अग्निभय, सोना एवं चाँदी के अतिरिक्त किसी भी प्रकार का शल्य वास्तु पुरुष के मर्मस्थान में स्थित हो तो बहुत अशुभ होता है। यदि धान्यों की भूसी मर्मस्थान या किसी अन्य स्थान में स्थित हो तो वह घन आगमन में अवरुद्ध होता है। इसी प्रकार यदि नागदन्त मर्मस्थान में अवस्थित हो तो दोष उत्पन्न करने वाला होता है; परन्तु वही नागदन्त यदि मर्मस्थान से अतिरिक्त स्थान में अवस्थित हो तो शुभ होता है।

महामर्म -

रोगाद्वायुं पितृतो हुताशनं शोषसूत्रमपि वितथात् ।

मुख्याद् भृशं जयन्ताच्च भृङ्गमदितेश्च सुग्रीवम् ॥

तत्सम्पाता नव ये तान्यतिमर्माणि सम्प्रदिष्टानि।

यश्च पदस्याष्टांशस्तत् प्रोक्तं मर्मपरिमाणम् ॥ (बृ.सं. 53.61-62)

रोग जयन्त से भृङ्ग तक और अदिति से सुग्रीव तक सूत्र बाँधने पर इन सूत्रों के परस्पर नव सम्पात स्थान वास्तुपुरुष के अतिमर्म स्थान होते हैं। साथ ही एक पद में अष्टमांशतुल्य मर्मस्थान का परिमाण होता है।

सुखमिच्छन् ब्रह्माणं यत्नाद्रक्षेद् गृही गृहान्तः स्थम् ।

उच्छिष्टाद्युपघाताद् गृहपतिरुपतप्यते तस्मिन् ॥ (बृ.सं. 53.64)

सुख की कामना करने वाले गृहस्वामी को चाहिए कि घर के मध्य में स्थित ब्रह्मा जी की यत्नपूर्वक रक्षा करे। उनके ऊपर उच्छिष्ट (जूठन) आदि (अपवित्र वस्तु) को रखने से गृहस्वामी को पीड़ा होती है।

दक्षिणभुजेन हीने वास्तुनरे ऽर्थक्षयोऽङ्गनादोषाः।

वामेऽर्थधान्यहानिः शिरसि गुणैर्हीयते सर्वैः॥65॥

स्त्रीदोषाः सुतमरणं प्रेष्यत्वं चापि चरणवैकल्ये।

अविकलपुरुषे वसतां मानार्थयुतानि सौख्यानि ॥(बृ.सं. 53.65-66)

वास्तुपुरुष की यदि दक्षिण भुजा हीन हो तो गृहस्वामी को धननाश और स्त्रीकृत दोष होता है। इसी प्रकार यदि वाम भुजा हीन हो तो गृहस्वामी के धन-धान्यों का नाश, शिर हीन हो तो धन, आरोग्य आदि सब गुणों का नाश तथा चरण हीन हो तो स्त्रीदोष, पुत्र की मृत्यु और दासत्व की प्राप्ति होती है। यदि वास्तु पुरुष के सभी अङ्ग पूर्ण हों तो उस स्थान में निवास करने वाले मनुष्य को मान और धन से समन्वित सुख की प्राप्ति होती है।।

3.2शल्यज्ञान-

अर्द्धनिचितं कृतं वा प्रविशन् स्थपतिगृहे निमित्तानि।

अवलोकयेद् गृहपतिः क्व संस्थितः स्पृशति किं चाङ्गम् ॥103॥

रविदीप्तो यदि शकुनिस्तस्मिन् काले विरौति परुषरवम्।

संस्पृष्टाङ्गसमानं तस्मिन् देशेऽस्थि निर्देश्यम् ॥(बृ.सं. 53.103-104)

अर्द्ध या सम्पूर्ण निर्मित गृह में प्रवेश करते हुए स्थपति यह देखे कि गृहस्वामी कहाँ पर स्थित है और किस अङ्ग का स्पर्श कर रहा है? उस समय दीप्त दिशा में स्थित पक्षीगण कठोर शब्द करते हों तो जिस स्थान पर गृहपति खड़ा हो उसके नीचे तथा जिस अङ्ग को गृहपति ने स्पर्श कर रक्खा हो, उस अङ्ग की हड्डी हो। उदयकाल से एक-एक प्रहर के क्रम से पूर्व आदि दिशा में सूर्य रहता है। जैसे कि उदयकाल से एक प्रहर तक पूर्व में, तत्पश्चात् क्रमशः द्वितीय प्रहर तक आग्नेय कोण में, तृतीय प्रहर तक दक्षिण में एवं सायंकाल तक नैर्ऋत्य कोण में; उसके बाद रात्रि के प्रथम प्रहर तक पश्चिम में, द्वितीय प्रहर तक वायव्य कोण में, तृतीय प्रहर तक उत्तर में और रात्रि के चतुर्थ प्रहर तक ईशान कोण में सूर्य रहता है। जिस दिशा से सूर्य निकल चुका हो वह 'अङ्गारिणी', जिसमें स्थित हो वह

'दीप्त', जिसमें पहुँचनेवाला हो वह 'धूमित' तथा शेष पाँच दिशाएँ 'शान्त' कहलाती हैं। अर्थात् उदय से प्रथम प्रहर तक ईशान कोण अङ्गारिणी, पूर्व दिशा दीप्त, आग्नेय कोण धूमित और शेष पाँच दिशाएँ शान्तसंज्ञक होती हैं।

शकुनसमयेऽथवाऽन्ये हस्त्यश्वश्वादयोऽनुवाशन्ते ।

तत्प्रभवमस्थि तस्मिंस्तदङ्गसम्भूतमेवेति ॥ (बृ.सं. 53.105)

शकुन देखने के समय यदि दीप्त दिशा की ओर मुख करके हाथी, घोड़ा, कुत्ता आदि जीव बोलें तो जिस स्थान पर गृहस्वामी स्थित होकर जिस अङ्ग का गृहपति स्पर्श करे, उसके नीचे उन जीवों के उसी अङ्ग की हड्डी हो,

सूत्रे प्रसार्यमाणे गर्दभरावोऽस्थिशल्यमाचष्टे।

श्वश्शृगालल्लङ्घिते वा सूत्रे शल्यं विनिर्देश्यम्॥ (बृ.सं. 53.106)

यदि सूत्र फैलाते समय गदहे का शब्द सुनाई दे तो गृहपति के नीचे हड्डी स्थित हो तथा कुत्ता व सियार प्रसारण के समय उस सूत्र को लाँघ जाएँ तो भी उक्त स्थान में शल्य होने का निर्देश देना चाहिए।

दिशि शान्तायां शकुनिर्मधुरविरावी यदा तदा वाच्यः।

अर्थस्तस्मिन् स्थाने गृहेश्वराधिष्ठितेऽङ्गे वा॥ (बृ.सं. 53.107)

उस समय जिस स्थान पर शान्त दिशा की और मुख करके पक्षीगण मधुर शब्द करें या वास्तुपुरुष के जिस अङ्ग पर गृहस्वामी स्थित हो, उस अङ्ग के नीचे धन समझना चाहिए।

3.3स्तम्भस्थापन एवं वेधविचार-

दक्षिणपूर्वे कोणे कृत्वा पूजां शिलां न्यसेत् प्रथमम्।

शेषाः प्रदक्षिणेन स्तम्भाश्चैवं समुत्थाप्याः॥

छत्रस्त्रगम्बरयुतः कृतधूपविलेपनः समुत्थाप्यः।

स्तम्भस्तथैव कार्यो द्वारोच्छ्रायः प्रयत्नेन॥ (बृ.सं. 53.110-111)

पहले दक्षिण-पूर्व के कोण में पूजन करके शिलान्यास कर प्रदक्षिण क्रम से शेष शिलाओं का न्यास करना चाहिए। इसी क्रम से स्तम्भों को छत्र, माला, वस्त्र, धूप और चन्दन से पूजा कर खड़ा कर

द्वार को भी प्रयत्न पूर्वक इसी प्रकार स्थिर करना चाहिए।

द्वार का वेधफल -

मार्गतरुकोणकूपस्तम्भभ्रमविद्धमशुभदं द्वारम् ।

उच्छ्रायाद् द्विगुणमितां त्यक्त्वा भूमिं न दोषाय ॥ (बृ.सं. 53.74)

यदि मार्ग, वृक्ष, दूसरे घर का कोना, कूप, खम्भा अथवा भ्रम (नाली) से गृहद्वार विद्ध होता हो अर्थात् ये सब द्वार के सम्मुख हों तो अशुभ होते हैं परन्तु गृहद्वार की जितनी ऊँचाई हो, उससे द्विगुणित भूमि को छोड़कर आगे वेध हो तो वह भूमि दोषप्रद नहीं होती है।

रथ्याविद्धं द्वारं नाशाय कुमारदोषदं तरुणा।

पङ्कद्वारे शोको व्ययोऽम्बुनिः स्राविणि प्रोक्तः॥

कूपेनापस्मारो भवति विनाशश्च देवताविद्धे।

स्तम्भेन स्त्रीदोषाः कुलनाशो ब्राह्मणाभिमुखे॥ (बृ.सं. 53.75-76)

यदि गृहद्वार का मार्ग से वेध हो तो गृहस्वामी की मृत्यु, वृक्ष से वेध हो तो बालकों में दोष, कीचड़ से वेध हो तो शोक, नाली से वेध हो तो व्यर्थ खर्च, कूप से वेध हो तो मृगी रोग, देव प्रतिमा से वेध हो तो गृहस्वामी का नाश, स्तम्भ से वेध हो तो स्त्रियों को समस्या और ब्रह्मा के सम्मुख हो तो सम्पूर्ण कुल का ही नाश करता है।

3.4 भवनों का आन्तरिक विन्यास एवं दिशानुसार उनके फल-

पुरुहूतानलयमनिर्ऋतिवरुणपवनेन्दुशङ्करा देवाः ।

विज्ञातव्याः क्रमशः प्राच्याद्यानां दिशां पतयः॥ (बृ.सं. 53.3)

पूर्व आदि आठ दिशाओं के क्रम से इन्द्र, अग्नि, यम, राक्षस, वरुण, वायु, चन्द्र और शिव स्वामी हैं।

समराङ्गणसूत्रधार में तीन वास्तुपदों के भेदों का वर्णन हैं यथा- इक्यासी पद, एक सौ पद एवं चौंसठ पद

एकाशीतिपदो यः स्यात्तथा शतपदश्च यः।

चतुःषष्टिपदो यश्च वास्तुरत्नः त्रिधोदितः ।। (समराङ्गणसूत्रधार 13.1)

समानि यानि भागानि चतुःषष्टिवदाचरेत् ।

असमान्यपि सर्वाणि चैकाशीतिपदोक्तवत् ॥ (मयमत 7.30)

जिन वास्तु-विन्यासों में सम संख्या में पद हों, उन्हें चौंसठ पद वाले वास्तु के समान और विषम संख्या में पद हों तो इक्यासी पद वाले वास्तु के समान देवों को स्थापित करना चाहिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न-

1. जिन वास्तु-विन्यासों में सम संख्या में पद हों, उन्हें किस पद वाले वास्तु देवों को स्थापित करना चाहिए।

(अ) इक्यासी पद **(ब) चौंसठ पद**

(स) सौ पद (अ) उपर्युक्त सभी

2. यदि गृहद्वार वृक्ष से वेध हो तो क्या समस्या होती है?

(अ) बालकों में दोष (ब) मृगी रोग

(स) व्यर्थ खर्च **(अ)** स्त्रियों को

रिक्तस्थान पूर्ति

1. शल्य काष्ठ का हो तो ....होती है। धनहानि / पशुहानि
2. गृहद्वार की जितनी ऊँचाई हो, उससे ....भूमि को छोड़कर आगे वेध हो तो वह भूमि दोषप्रद नहीं होती है। द्विगुणित / अर्द्ध

सत्य / असत्य

1.वास्तुपुरुष का जो मर्मस्थान पीडित होगा, गृहस्वामी के भी उस अङ्ग में पीड़ा होती है।**सत्य** / असत्य

2. भूमि पूजा के उपरान्त पदविन्यास की व्यवस्था की जाती है। **सत्य** / असत्य

इकाई:4 वास्तुचक्रनिर्णय

वास्तुचक्र रचना एवं पदानुसारगृहविन्यास- निवास योग्य भूमि को विविध प्रकार की भूमियों के विभाजन के पूर्व योजना हेतु पेचक, पीठक, महापीठादि अनेक प्रकार के पदविन्यासों का आचार्यो ने वर्णन किया है। वास्तुनिर्माण से पहले भूमि के चौंसठ भाग, इक्यासी पद इत्यादि करने पर जो भाग प्राप्त होता होता है उसे पद कहते हैं। इन प्रत्येक पदों के देवता होते हैं। इन्हें 'वास्तुमण्डल चक्र' कहते हैं। इन्ही वास्तुचक्रों से निर्णय करते है कि किस पद पर होना प्रशस्थ रहेगा और कहाँ शुभ हैं। व्यावहारिक दृष्टि यहाँ पर हम इक्यासी पद वास्तु तथा चौंसठ पदवास्तु का सामान्य वर्णन करेंगे-

4.1. एकाशीतिपदवास्तु-

एकाशीतिविभागे दश दश पूर्वोत्तरायता रेखाः ।

अन्तस्त्रयोदश सुरा द्वात्रिंशद्वाह्यकोष्ठस्थाः॥ (बृ.सं. 53.42)

इक्यासी पद के क्षेत्र बनाने के लिए दश रेखा पूर्वपरा और दश रेखा दक्षिणोत्तरा बनानी चाहिए, इस प्रकार रेखायें करने से इक्यासीपद विभाग बन जाएगा। उस विभाग के बाहर तेरह और अन्दर बत्तीस देवता होते हैं।

शिखिपर्जन्यजयन्तेन्द्रसूर्यसत्या भृशोऽन्तरिक्षश्च।

ऐशान्यादिक्रमशो दक्षिणपूर्वेऽनिलः कोणे॥

पूषा वितथबृहत्क्षतयमगन्धर्वाख्यभृङ्गराजमृगाः।

पितृदौवारिकसुग्रीवकुसुमदन्ताम्बुपत्यसुराः

शोषोऽथ पापयक्ष्मा रोगः कोणे ततोऽ हिमुख्यौ च।

भल्लाटसोमभुजगास्ततोऽ दितिर्दितिरिति क्रमशः॥ (बृ.सं. 53.43-45)

उपर्युक्त क्षेत्र में ईशान कोण से लेकर क्रम से शिखी, पर्जन्य, जयन्त, इन्द्र, सूर्य, सत्य, भृश और अन्तरिक्ष देवता हैं। अग्नि कोण से लेकर क्रम से अनिल, पूषा, वितथ, बृहत्क्षत, यम, गन्धर्व, भृङ्गराज और मृग देवता हैं। नैर्ऋत्य कोण से लेकर क्रम से पिता, दौवारिक, सुग्रीव, कुसुमदन्त, वरुण, असुर, शोष और पापयक्ष्मा देवता हैं। वायव्य कोण से लेकर रोग, सर्प, मुख्य, भल्लाट, सोम, भज, अदिति तथा दिति देवता हैं।

आन्तरिक भाग में स्थित देवता -

मध्ये ब्रह्मा नवकोष्ठकाधिपोऽ स्यार्यमा स्थितः प्राच्याम्।

एकान्तरात् प्रदक्षिणमस्मात् सविता विवस्वांश्च ॥

विबुधाधिपतिस्तस्मान्मित्रोऽन्यो राजयक्ष्मनामा च।

पृथिवीधरापवत्सावित्येते ब्रह्मणः परिधौ

आपो नामैशाने कोणे हौताशने च सावित्रः।

जय इति च नैर्ऋते रुद्र आनिलेऽभ्यन्तरपदेषु ।। (बृ.सं. 53.46-48)

पूर्वोक्त क्षेत्र के अन्तर्गत ये देवता विराजमान हैं। जैसे मध्य के नव कोष्ठों में ब्रह्मा, ब्रह्मा से पूर्व अर्यमा, प्रदक्षिण क्रम से एक पद व्यवहित करके सविता, विवस्वान्, इन्द्र, मित्र, राजयक्ष्मा, पृथ्वीधर, आपवत्स- ये आठ देवता एकान्तर से ब्रह्माजी की परिधि को व्याप्त करके विराजमान हैं। साथ ही ईशान कोण में पर्जन्य के नीचे आप, आग्नेय कोण में अन्तरिक्ष के नीचे सावित्र, नैर्ऋत्य कोण में दौवारिक के नीचे जय और वायव्य कोण में पापयक्ष्मा के नीचे रुद्र स्थित हैं।

अथात्र स्थितानां देवतानां पदसंख्याप्रदर्शनार्थमाह -

आपस्तथापवत्सः पर्जन्योऽग्निर्दितिश्च वर्गोऽयम्।

एवं कोणे कोणे पदिकाः स्युः पञ्च पञ्च सुराः ॥49॥

बाह्या द्विपदाः शेषास्ते विबुधा विंशतिः समाख्याताः।

शेषाश्चत्वारोऽन्ये त्रिपदा दिक्ष्वर्यमाद्यास्ते ॥50॥ (बृ.सं. 53.49-50)

इस क्षेत्र के ईशान कोण में आप, आपवत्स, पर्जन्य, अग्नि, दिति- ये पाँच देवता एकपदिक (एक-एक पद के स्वामी) हैं। इसी तरह प्रत्येक कोण में पाँच-पाँच देवता एकपदिक हैं। जैसे- आग्नेय कोण में सविता, सवित्र, अनल या अनिल, अन्तरिक्ष, पूषा। नैर्ऋत्य कोण में इन्द्र, जय, दौवारिक, पिता, मृग और वायव्य कोण में राजयक्ष्मा,रुद्र, पापयक्ष्मा, रोग, नाग- ये पाँच देवता एकपदिक हैं। शेष बाह्य कोष्ठ में स्थित देवता द्विपदिक हैं, जो कुल बीस होते हैं। जैसे- पूर्व में जयन्त, इन्द्र, सूर्य, सत्य, भृश। दक्षिण में वितथ, बृहत्क्षत, यम, गन्धर्व, भृङ्गराज। पश्चिम में सुग्रीव, कुसुमदन्त, वरुण, असुर, शोष और उत्तर में मुख्य, भल्लाट, सोम, भुजग और अदिति- ये द्विप- दिक देवता हैं। ब्रह्मा से पूर्व आदि दिशाओं में शेष अर्यमा आदि चार देवता (अर्यमा, विवस्वान्, मित्र और पृथ्वीधर त्रिपदिक हैं।

एकाशीतिपदे वास्तु ब्रह्मा मध्ये नवांशकैः।

षद्दा अर्यमाद्याः साध्वेंशा कोणेषु मध्यतः।।

सर्वेऽपि भागिका बाह्यो देवाः ईशादयश्चैककादशः।।(वास्तुमण्डन1. 113)

ईशान कोण | पूर्व | आग्नेयकोण

शिखी	**पर्जन्य**	**जयन्त**	**इन्द्र**	**सूर्य**	**सत्य**	**भृश**	**अन्तरिक्ष**	**अनिल**
दिती	आप	जयन्त	इन्द्र	सूर्य	सत्य	भृश	सावित्र	पूषा
अदिति	अदिति	आपवत्स	अर्यमा	अर्यमा	अर्यमा	सविता	वितथ	वितथ
भुजग	भुजग	पृथ्वीधर	**ब्रह्मा**	**ब्रह्मा**	**ब्रह्मा**	विवश्वान	बृहक्षत	बृहक्षत
सोम	सोम	पृथ्वीधर	**ब्रह्मा**	**ब्रह्मा**	**ब्रह्मा**	विवश्वान	यम	यम
भल्लाट	भल्लाट	पृथ्वीधर	**ब्रह्मा**	**ब्रह्मा**	**ब्रह्मा**	विवश्वान	गन्धर्व	गन्धर्व
मुख्य	मुख्य	राजयक्ष्मा	मित्र	मित्र	मित्र	इन्द्र	भृङ्गराज	भङ्गराज
नाग	रुद्र	शोष	असुर	वरुण	कुसुमदन्त	सुग्रीव	जय	मृग
रोग	पापयक्ष्मा	शोष	असुर	वरुण	कुसुमदन्त	सुग्रीव	दौवारिक	पिता

वायव्य कोण | पश्चिम | नैर्ऋत्य

3.2. वास्तुनर के अङ्गप्रविभाग-

षड्वंशमेकहृदयं चतुर्मर्म चतुः सिरम्।

मेदिन्यां वास्तुपुरुषं निकुब्जं प्राक्शिरं विदुः॥ (मयमत 7.49)

वास्तु-पुरुष निकुब्ज पूर्व दिशा में सिर किए हुए वास्तु- भूमि पर स्थित है। उसके छः वंश (अस्थियाँ), चार मर्मस्थल, चार सिराएँ तथा एक हृदय होता है।

तस्योत्तमाङ्ग विज्ञेयमार्यको नाम देवता।

सविन्द्रो दक्षिणभुजः साविन्द्रः कक्षमुच्यते ॥50॥ (मयमत 7.50)

उस वास्तुपुरुष के सिर आर्यकसंज्ञक देवता होते हैं। सविन्द्र दाहिनी भुजा एवं साविन्द्र कक्ष होते हैं।

आपश्चैवापवत्सश्च सकक्षो वामतो भुजः।

विवस्वान् दक्षिणं पार्श्वं वामपार्श्वं महीधरः॥ (मयमत 7.51)

आप एवं आपवत्स कक्षसहित वाम भुजा में, विवस्वान् दक्षिण पार्श्व और महीधर वाम पार्श्व में स्थित होते हैं।

मध्ये ब्रह्ममयः कायो मित्रः पुंस्त्वं विधीयते।

इन्द्रश्चैवेन्द्रराजश्च दक्षिणः पाद ईरितः ॥ (मयमत 7.52)

वास्तुपुरुष का बीच में शरीर ब्रह्मा के स्थान होते हैं एवं मित्र उसके पुरुषलिङ्ग होते हैं। इन्द्र एवं इन्द्रराज वास्तुपुरुष के दक्षिण पाद हैं।

रुद्रो रुद्रजयो वामपादः शेते त्वधोमुखः।

वस्तुत्रिभागमध्ये तु वंशाः षट् प्रागुदङ्मुखाः ॥ (मयमत 7.53)

रुद्र एवं रुद्रजय इसके वाम पाद हैं और वह अधोमुख होकर भूमि पर स्थित है। इसके छः वंश (रेखाएँ) हैं, जो पूर्व एवं उत्तर की ओर स्थित हैं।

वस्तुमध्ये तु मर्माणि ब्रह्मा हृदयमुच्यते।

निष्कुटांशाः सिरा ज्ञेया इत्येष पुरुषः स्मृतः ॥ (मयमत 7.54)

वास्तुमण्डल के मध्य में वास्तुपुरुष के मर्मस्थल और ब्रह्मा वास्तुपुरुष के हृदय है। वास्तुमण्डल के निष्कुट अंश (रेखाये) वास्तुपुरुष की रक्तवाहिनी सिराएँ होती हैं।

गृहे गृहे मनुष्याणां शुभाशुभकरः स्मृतः।

तस्याङ्गानि गृहात्रै विद्वान् नैवोपपीडयेत् ॥ (मयमत 7.55)

मनुष्यों के प्रत्येक गृह में वास्तुपुरुष का निवास होता है, जो गृह में रहने वालों के शुभ एवं अशुभ का

कारक होता है। विद्वान् मनुष्य को वास्तु-पुरुष के अङ्गों पर स्तम्भ, भित्ति इत्यादि से पीड़ित नहीं करे।

पूर्वोत्तरदिमूर्धा पुरुषोऽयमवाङ्मुखोऽस्य शिरसि शिखी।

आपो मुखे स्तनेऽ स्यार्यमा ह्युरस्यापवत्सश्च ॥ (बृ.सं. 53.51)

पर्जन्याऽद्या बाह्या दृक्श्रवणोरः स्थलांसगा देवाः।

सत्याद्याः पञ्च भुजे हस्ते सविता च सावित्रः ॥52॥

वितथो बृहत्क्षतयुतः पार्श्वे जठरे स्थितो विवस्वांश्च।

ऊरू जानु च जङ्घे स्फिगिति यमाद्यैः परिगृहीताः ॥53॥

वामपार्श्वस्थाः । एते दक्षिणपार्श्वे स्थानेष्वेवं च मेढ्रे

शक्रजयन्तो हृदये ब्रह्मा पिताऽङ्घ्रिगतः ॥54॥ (बृ.सं. 53.52-54)

यह वास्तु पुरुष ईशान कोण की ओर शिर करके अधोमुख होकर स्थित है। इसके शिर में अग्नि, मुख में आप, स्तन में अर्यमा और छाती में आपवत्स स्थित हैं। बाह्य कोष्ठस्थित पर्जन्य आदि देवता नेत्र, कान, छाती और कन्धे में स्थित हैं। जैसे- नेत्र में पर्जन्य, आदि पाँच देवता (सत्य, भृश, अन्तरिक्ष, अनिल और पूषा), हाथ में वितथ और बृहत्क्षत, पेट में विवस्वान्, ऊरु में यम, जानु में गन्धर्व, जंघा में भृङ्गराज और कुल्हे में मृग स्थित है। ये सब देवता दक्षिण अङ्ग के हैं। इसी तरह वाम पार्श्व के सभी अङ्गों में देवता हैं। जैसे कि वाम स्तन में पृथिवीधर, नेत्र में दिति, कान में अदिति, छाती में भुजग, कन्धे में सोम, बाहु में भल्लाट, मुख्य, अहि, रोग और पापयक्ष्मा, हाथ में रुद्र और राजयक्ष्मा, बगल में शोष और असुर, ऊरु में वरुण, जानु में कुसुमदन्त, जंघा में सुग्रीव तथा कुल्हे में दौवारिक स्थित है। इसी तरह लिङ्ग में शक्र और जयन्त, हृदय में ब्रह्मा और पाँव में पिता स्थित हैं। इस तरह इक्यासी पद में नगर, ग्राम, गृह आदि के सम्बन्ध में वास्तुपुरुष के अङ्गों का विभाग करें।

4.3 वृषवास्तु- गृहाराम्भ काल में सभी अंगों वाले वृषभ के देह में सूर्य नक्षत्र से चक्र बनाकर तथा उसमें नक्षत्रों को लिखकर उनका फल समझना चाहिए। यथा- शीर्ष में 3, अग्रपाद में 4, पृष्ठपाद में 4, पृष्ठ में 3, दक्षिण कुक्षी में 4, पूछ में 3, वाम कुक्षी में 4 एवं नासिक में दो नक्षत्रों का न्यास करना चाहिए। जैसा वास्तुमण्डन में वर्णन है कि-

सूर्यभान्यस्तके त्रीणि चत्वारि चाग्रपादयोः।

चत्वारि पश्चात्पदयोः पुच्छे त्रीणि प्रदापयेत्।।

वामकुक्षौ तु चत्वारि पुनः चत्वारि दक्षिणे।

पृष्ठे च त्रीणि धिष्ण्यानि नासिकायां द्वयं न्यसेत्।।(1.37-38)

वृषचक्र का फल- मस्तकपाद पर स्वामी को विध्वंश व मृत्यु, अग्रपाद में स्थिरता, पश्चिम पाद में पूँछ में क्लेश, वाम कुक्षी में धनक्षय एवं दक्षिण कुक्षी में धनागम, पृष्ठ में धनागम तथा विद्या और नासिका पाद में पति का क्षय होता है।

अंग	मस्तकपाद	अग्रपाद	पश्चिमपाद	दक्षिणपृष्ठ	वामकुक्षि	पृष्ठ	नासिका	
नक्षत्र	3	4	4	3	4	3	2	
फल	विध्वंश व मृत्यु	स्थिरता	पूँछ में क्लेश	दक्षिण कुक्षी	धनक्षय	धनागम एवं विद्या	पतिक्षय	

त्रिवेदवेदाग्नियुगाग्निवेदत्रिकेषु भानोः शशिभं गृहेषु।

दाहो निनाशः स्थिरताधनश्रीः शूलश्च दारिद्र-यमृती क्रमेण।।(मुहूर्त्तचिन्तामणि)

सूर्य के नक्षत्र से चन्द्र स्थित नक्षत्र पर्यन्त गिनने पर यदि प्रथम के तीन नक्षत्रों में गृहारम्भ का नक्षत्र हो तो दाह, आगे के चार नक्षत्रों में करें तो विनाश, अगले चार नक्षत्रों मे स्थिरता, इससे अग्रिम तीन नक्षत्रों में धनलाभ, अग्रिम चार नक्षत्रों में लक्ष्मी, आगे के तीन नक्षत्रों में शून्यता, अग्रिम चार नक्षत्रों में दरिद्रता एवं अन्तिम 3 नक्षत्रों में मृत्यु समझें।

अंग	शिर	अग्रपाद	पृष्ठपाद	पृष्ठ	वामकुक्षि	दक्षिणकुक्षि	पुछ	मुख
नक्षत्र	3	4	4	3	4	3	4	3
फल	दाह	विनाश	स्थिरता	धन	श्री	शून्यता	दरिद्रता	मृत्यु

4.4 . चतुःषष्टीपदवास्तु-

अष्टाष्टकपदमथवा कृत्वा रेखाश्च कोणगास्तिर्यक्।

ब्रह्मा चतुष्पदोऽस्मिन्नर्धपदा ब्रह्मकोणस्थाः।।

अष्टौ च बहिष्कोणेष्वर्धपदास्तदुभयस्थिताः सार्धाः।

उक्तेभ्यो ये शेषास्ते द्विपदा विंशतिस्ते हि ॥ (बृ.सं. 53.55-56)

नौ पूर्वापरा और नौ दक्षिणोत्तरा रेखा खींचकर, इसके चारों कोनों में कर्णाकार दो-दो रेखायें खींचने से चौंसठ पद का क्षेत्र बन जाता है। इस क्षेत्र में चार पदों का स्वामी ब्रह्मा और ब्रह्मा के चारों कोनों में आठ देवता (आप, आपवत्स, सविता, सवित्र, इन्द्र, जयन्त, राजयक्ष्मा और रुद्र और बाहर के चारों कोनों में आठ देवता (शिखी, अन्तरिक्ष, अनिल या अनल, मृग, पिता, पापयक्ष्मा, रोग और दिति) अर्धपदीय हैं। इनके दोनों तरफ पर्जन्य, भृश, पूषा, भृङ्गराज, दौवारिक, शोष, नाग और अदिति सार्धपदीय (डेढ़ पद के स्वामी) हैं तथा शेष बीस देवता (जयन्त, इन्द्र, सूर्य, सत्य, वितथ, बृहत्क्षत, यम, गन्धर्व, सुग्रीव, कुसुमदन्त, वरुण, असुर, मुख्य, भल्लाट, सोम, भुजग, अर्यमा, विवस्वान्, मित्र और पृथ्वीधर - ये बीस देवता) द्विपदीय हैं।

चतुषष्ठीपदे वास्तु मध्ये ब्रह्मा युगांशकः।

अर्यमाद्याश्चतुर्भागा मध्यकोणे द्विभागिगाः।।

बाह्य कोणेषु सार्द्धंशाशेषा एकपदा सुराः।(वास्तुमण्डन1.112)

चौंसठ पद के वास्तु में मध्य के चार पदों में ब्रह्मा अवस्थित है। अर्यमा, विवस्वान्, मैत्र और पृथिवीधर समान पदों में होते हैं। कोण के आठों पदों पर आप, आपवत्स, सावित्री, सविता, महेन्द्र, जय, रूद्र और रुद्रदास दो दो पदों में एवं बाहर स्थित आठों देवता आधे- आधे पदों में होते हैं। अन्य देवता एक- एक पद के होते हैं।

चतुषष्ठीपदवास्तु-

ईशान पूर्व आग्नेय

शिखि / अदिति	पर्जन्य	जयन्त	इन्द्र	सूर्य	सत्य	भृश	अन्त. / अनिल
अदिति	पर्जन्य / अदिति	जयन्त	इन्द्र	सूर्य	सत्य	भृश / पूषा	पूषा
भुजग	भुजग	आप. / आप	अर्यमा	अर्यमा	सविता / सावित्र	वितथ	वितथ
सोम	सोम	पृथिवीधर	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विवश्वान्	बृहक्षत	बृहक्षत
भल्लाट	भल्लाट	पृथिवीधर	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विवश्वान्	यम	यमः
मुख्य	मुख्य	रुद्र / राजयक्ष्.	मित्र	मित्र	इन्द्र / जय	गन्धर्व	गन्धर्व
नाग	नाग / शोष	असुर	वरुण	कुसुमदन्त	सुग्रीव	भृङ्गराज / दौवा.	भृंगराज
रोग / पापयक्ष्.	शोष	असुर	वरुण	कुसुमदन्त	सुग्रीव	दौवारिक	मृग / पिता

वायव्य पश्चिम नैर्ऋत्य

4.4 शतपदवास्तु- ब्रह्मा सोलह पदों अर्यमा आदि देवता आठ पद में, ब्राह्मकोणों के डेढ़ पद, ब्रह्मा कोणों के आठों देवता दो- दो पदों में एवं अन्य देवता पूर्वानुसार एक- एक पद में होते हैं। जैसा कि वास्तुमण्डन में वर्णन है-यथा

ब्रह्मा तु षोडशपदो वस्वंशा अर्यमादयः।।115

बाह्यकोणेषु सार्द्धंशा शेषास्तु पूर्ववास्तुवत्।। 116

4.5 राशियों द्वारा गृह द्वार वास्तु ज्ञान- वृश्चिक, मीन एवं सिंह राशि वाले मनुष्यों को गृह का द्वार पूर्व में, कन्या, कर्क तथा मकर राशिवालों को दक्षिण में धनु, तुला और मिथुन राशि वालों को पश्चिम में और कुम्भ, वृष और मेष राशिवाले व्यक्तियों को उत्तर दिशा में गृह का द्वार करना चाहिए। जैसा कि वास्तुमण्डन में वर्णन है-

मीनवृश्चिकासिंहानां पत्युः पूर्वामुखं गृहम्।
कन्यामकरकर्काणां गृहं याम्याननं मतम।।
तुलामिथुनचापानां पश्चिमास्य गृहं भवेत्।
कुम्भमेषवृषेशस्य पुंसः सौम्याननं शुभम्।। (1.41-42)

इकाईः 5.वास्तुकला का प्रभाव

5.1**ईशानकोण को बन्द करने के परिणाम-** ईशान कोण(उत्तर-पश्चिम) भगवान् ईश का स्थान है, इसको मार्ग से, रसोईघर आदि निर्माण से एवं अन्य किसी भी प्रकार से बन्द करेंगे तो वास्तुदेव के प्रभाव से गृहस्वामी को दुर्घटना और आजीविका के होते हुए भी आर्थिक परेशानियों का सामना करना पड़ेगा।

5.2**आग्नेय कोण को बन्द करने के परिणाम-** आग्नेय कोण के अग्निदेवता है एवं अग्नि का कारक स्थान है, इसको मार्ग से, भण्डार गृह के निर्माण से एवं अन्य किसी भी प्रकार से बन्द करेंगे तो वास्तुदेव के प्रभाव से अग्निप्रकोप, ग्रह निवासियों को बीमारी, मानसिक प्रताड़ना और अवनति का प्रकोप झेलना पड़ेगा।

5.3**नैर्ऋत्यकोण को बन्द करने के परिणाम-** नैर्ऋत्यकोण (दक्षिण-पश्चिम) के स्वामी राहु है, इस कोण के दोष अधिक प्रभावशाली होते हैं। अतः यहाँ गृहस्वामी की उन्नति,शारीरिक कष्ट पारिवारिक सुख लिए गृहस्वामी और बच्चो के शयनकक्ष के लिए उत्तम स्थान है। इस कोण को नीचे और ऊपर सदैव ऊँचा रखना चाहिए। परन्तु यहाँ पर पाकशाला या गड्ढादि से दूषित होगा तो गृहस्वामी को किसी भी कार्य में सफलता नहीं मिलेगी, तथा कदम- कदम पर असफलता का सामना करना पड़ेगा।

5.4**वायव्य कोण को बन्द करने के परिणाम-** इस कोण के स्वामी वायुदेव है अगर इस कोण में रास्ता हो तो उस रास्ते को बन्द करने से यह कोण दूषित हो जाता है, इससे गृहक्लेश, बीमारी और आर्थिक परेशानियों से जीवन दुःखमय रहेगा।

5.5**भूखण्ड की आकृति तथा उनके फल-** आयत' क्षेत्राकार भूमि पर वास करने से (जिस भूमि के आमने-सामने की दोनों भुजाएँ समान और कोण सम कोण हों) सर्वसिद्धि, चतुरस्त्र (जिसकी लम्बाई चौड़ाई समान हो) भूमि पर धनागम, वृत्ताकार भूमि बुद्धि की वृद्धि, भद्रासन भूमि सब प्रकार का कल्याण, चक्राकार पृथ्वी पर दरिद्रता, विषम भूमि (ऊँची नीची) पर शोक, त्रिकोणाकार भूमि पर राजभय, शकटाकार भूमि पर धनक्षय, दण्डाकार भूमि पर पशुओं का

नाश, शूर्पाकार भूमि पर गोधन का नाश, व्यजनाकार भूमि पर अर्थक्षयबन्धन भूमि पर पीड़ा तथा धनुषाकार भूमि पर निवास करने पर विशेष भय, कुम्भकार भूमि कुष्ठरोगकारी, पवनाकार भूमि नेत्रज्योति और धननाश, मुरजाकार भूमि बन्धु-बान्धवों का क्षय। इस प्रकार भूमि के आकार का वास्तुशास्त्र के ग्रन्थों में उल्लेख मिलता है। जैसा कि वास्तुरत्नावली में वर्णन है-

आयते सिद्धयस्सर्वाश्चतुरस्त्रे धनागमः।

वृत्ते तु बुद्धिवृद्धिः स्याद्भद्रं भद्रासनं भवेत्॥

चक्रे दारिद्र्यमित्याहुर्विषमे शोकलक्षणम्।

राजभीतिस्त्रिकोणे स्याच्छकटे तु धनक्षयः॥

दण्डे पशुक्षयं प्राहुः शूर्पे वासे गवां क्षयः।

कर्म्मे तु बन्धनं पीडाः धनुः क्षेत्रे भयं महत्।।

व्मुम्भाकारे कुष्ठरोगा भवत्येव न संशयः।

पवने नश्यति नेत्रं धनञ्च बन्धुक्षयो मुरजे॥ (वा. र. 60-64)

अर्थात् - आयताकार, वर्गाकार, भद्रासन, वृत्ताकार, त्रिशूल के सदृश, शुभ चिह्न के समान, मटके के समान, महल की ध्वजा के समान भूमि देवताओं के लिए भी दुर्लभ होती है अर्थात् सभी प्रकार के भवनों के लिए भूमि शुभ होती है। गोमुखी भूखण्ड आवासीय भवन और सिंहमुखी भूखण्ड पर व्यावसायिक भवन बनाना शुभ है। इसके अतिरिक्त भूखण्ड त्रिभुजाकार, विषमवाहु, चक्राकार, सूर्पाकार, अर्धवृत्ताकार, अण्डाकार, शकटाकार, धनुषाकर, विजनाकार, कूर्मपृष्ठाकार, ताराकार, त्रिशूलाकार, पक्षीमुख एवं कुम्भाकार भूखण्ड अशुभ होते हैं। लेकिन इन भूखण्डों पर भवन का निर्माण करना अत्यावश्यक हो तो उनके बीच में आयताकार या वर्गाकार आकार निर्णय भवन निर्माण कर सकते हैं।

चतुरस्त्रां द्वीपाकारां सिंहोक्षाश्वेभरूपिणीम्।

वृतञ्च भद्रपीठञ्च त्रिशूलं लिङ्गसन्निभम्।।

प्रासादध्वजकुम्भादि देवानामपि दुर्लभाम् ।।(**विश्वकर्माप्रकाश** 1.27-28)

5.6 प्रशस्त भूमि की आकृतियाँ-

देवताओं और द्विजातीयों के लिए आयताकार भूमि शुभ होती। भूखण्ड की आकृति शास्त्रोक्त उत्तम होनी चाहिए तथा उसकी दक्षिण एवं पश्चिम दिशा सदैव ऊँची रखें जैसा कि मय के वचन हैं-

देवानां तु द्विजातीनां चतुरस्त्रायताः श्रुताः।

वास्त्वाकृतिरनिन्द्या सावाक्प्रत्यग्दिक्समुन्नता।।(वि.क.प्र.3.1)

5.7**आवासीय कक्षों का आकार-** आवासीय कक्षों का आकार वर्गागार या आयताकार श्रेष्ठ होता है।

5.आधुनिक आवासीय वास्तु-

6.1. अपार्टमेंट(बहुमंजिला गृह) फ्लैट- भूमि विचार-

वास्तु भूमि पूर्व या उत्तर में ऊँची हो तो गृहपति के पुत्र और धन का नाश, दुर्गन्धयुत हो तो पुत्र का नाश, टेढ़ी हो तो बन्धुओं का नाश और दिग्भ्रमित तो स्त्रियों को गर्भ में समस्या होती है। घर की वृद्धि चाहने वाले मनुष्य को वास्तु भूमि में चारो ओर समान रूप से वृद्धि करनी चाहिए। वास्तु भूमि वृद्धि उत्तर या पूर्व की ओर करनी चाहिए, क्योंकि उत्तर अथवा पूर्व की ओर वास्तुभूमि की वृद्धि करने पर कम दोष होते हैं अर्थात् मित्रों से द्वेष, मन में सन्ताप आदि सहन करने योग्य होते हैं। किन्तु जिस मनुष्य में इन दोषों को सहन करने की शक्ति नहीं हो तो वास्तु भूमि की वृद्धि नहीं करनी चाहिए। यथा-

प्रागुत्तरोन्नते धनसुतक्षयः सुतवधश्च दुर्गन्धे।
वक्रे बन्धुविनाशो न सन्ति गर्भाश्च दिङ्मूढे ॥113॥
इच्छेद्यदि गृहवृद्धिं ततः समन्ताद्विवर्धयेत्तुल्यम्।
एकोद्देशे दोषः प्रागथवाऽप्युत्तरे कुर्यात् ॥114॥

वास्तु भूमि की वृद्धि यदि पूर्व की ओर की हो तो मित्रों से द्वेष, दक्षिण की ओर की हो तो मृत्यु का भय, पश्चिम की ओर की हो तो धननाश और उत्तर की ओर की हो तो मन में चिन्ता बनी रहती है। **यथा-**

प्राग्भवति मित्रवैरं मृत्युभयं दक्षिणेन यदि वृद्धिः।
अर्थविनाशः पश्चादुदग्विवृद्धिर्मनस्तापः ॥115॥

भूमि चयन के पश्चात् वास्तुशास्त्र के निम्नलिखित मूल मानकों का विचार करना भी नितान्त आवश्यक है।

- **वास्तुपदविन्यास**- स्थापत्यकला की मुख्य परियोजना वास्तुयोजना।
- **दिक्साधन**- दिक्-निर्धारण।
- **मानप्रमाण निर्णय**- हस्त-अङ्गुली या आधुनिक साधनों द्वारा माप निर्धारण करना।
- **आयादि चिन्तन**- भवन के विस्तार तथा द्वारादि स्थापना के लिए आय, व्यय, अंश, ऋक्ष, योनि, वार, तिथि, ध्वजादि का विचार।
- **पताकादि विश्लेषण**- भवन स्वरूप को देखते ही भवन की स्थिति का आकलन।

भूमि चयन, वास्तु भेद, प्रतिकृति(एकशाल, द्विशाल, त्रिशाल, चतुश्शाल आदि) भवन नियोजन (Building bylaws), चय विधि(Material selection), भवनाङ्ग(स्तम्भ, द्वार, शाला, अलिन्द, पीठादि), सज्जा (Decoration), दोषादि।

आवासीय वास्तु- आवास के लिए फ्लैट, बंगला, गृह, हवेली, कॉलोनी आदि के लिए वास्तु मण्डल के प्रत्येक देवता एक ब्रह्मांडीय बल का प्रतिनिधित्व करते हैं जो पृथ्वी पर एक भौतिक विशेषता के रूप में वास्तुशास्त्र द्वारा समझ सकते हैं। प्रत्येक दिशा का अपना संरक्षक होता है, उन्हें दिक्पाल कहते हैं।

उत्तर-पूर्व (ईशान कोण) दिशा का ग्रह बृहस्पति है। शिव पूर्वोत्तर दिशा के देव हैं। बृहस्पति मन्त्र, वेदों, देवताओं, धार्मिक कर्त्तव्य का प्रतिनिधित्व करते हैं, गाय, वित्त आदि यद्यपि केतु किसी भी दिशा का शासक नहीं है, तथापि एक मत के अनुसार यह पूर्वोत्तर का भी प्रतिनिधित्व करता है। केतु दर्शन, गणपति, गूढ विज्ञान, गूढ ज्ञान का प्रतिनिधित्व करता है। पूजागृह के लिए ईशान कोण व देवों की मूर्तियाँ पूर्वोत्तर दिशा में स्थापित करना शुभ है। पूजा करते समय पूर्वोत्तर दिशा में ही रखना चाहिए। घर में केतु का प्रतिनिधित्व स्थिर है पानी, पीछे के दरवाजे, सामने के दरवाजे के वेंटिलेशन, सीढ़ी तथा ऊँचाई कम रखना अनिवार्य है। अध्ययन कक्ष शुभ है।यदि इस दिशा में अविवाहित युवतियों का शयनकक्ष नहीं बनाना चाहिए क्योंकि इससे विवाह में देरी, कार्य हानि तथा शौचालय होगा तो यह धन से दूरी रखेगा और जीवन में दुःख और असफलता की ओर अवश्य आकर्षित करेगा तथा भोजनगृह अपव्यय व दुर्घटना की कारक होती है। शम्भुकोणप्लवा भूमिःकर्तुः श्रीसुखदायिनी।

पूर्व दिशा-(East direction) इन्द्र पूर्व के अधिपति देवता हैं। प्रातःकाल की सूर्य किरणें स्वास्थ्य के लिए महत्त्वपूर्ण होती हैं वही मध्याह्न काल में रेडियोधर्मिता के प्रभाव से प्रतिकूल होती हैं। इस दिशा में स्नानगृह और आवास से जल बाहर निकालना श्रेष्ठ है। डाईंग रूम पूर्व एवं आग्नेय के मध्य में, द्वार पूर्व में रखना श्रेष्ठ है तथा अधिक रिक्त स्थान भी शुभ होता है। जैसा कि वृहद्वास्तुमाला में कहा गया है विद्धात्यचिरेणैव पूर्वादिप्लवतो मही, पूर्वप्लवा वृद्धिकरी ।

दक्षिण-पूर्व/ Southeast (आग्नेय कोण) दक्षिण-पूर्व दिशा का शासन अग्निदेव द्वारा किया जाता है, वैदिक देवताओं में अग्नि शुद्ध करनेवाला, भक्षण करनेवाला और आनंद देनेवाला, अग्नि ही है जो तैयार

करती है और परिपूर्ण करती है। जीवन की अग्नि को ऋग्वेद् में वैश्वानर के रूप में वर्णित किया गया है। आध्यात्मिक अग्नि, वह शक्ति जो मनुष्यों को आध्यात्मिक उन्नति की ओर अधिक से अधिक ऊँचाइयों तक ले जाती है, और यही ब्रह्मांडिक अग्नि भी है जो ब्रह्मांड को बनाए रखती है।

दक्षिण-पूर्व (आग्नेय कोण) में रसोई घर, जनरेटर कक्ष, बिजली के मेन स्विचबोर्ड एवं ईन्वटर(Inverter) आदि शुभ है लेकिन दम्पति का शयनकक्ष होगा तो कलह बनी रहती है तथा इसमें त्रुटियों के परिणामस्वरूप चोरी, ऋण, अपमान, और हानि हो सकती है।

दक्षिण- दक्षिण यम द्वारा शासित है, मृत्यु के प्रभु, कानून के शासन का अवतार जो न्याय प्रदान करता है। अपने कर्मों के अनुसार। दक्षिण का ग्रह मंगल है। मंगल कपड़े, आग, स्वतन्त्रता, तत्त्वों पर नियंत्रण का प्रतिनिधित्व करता है, आक्रामकता, हथियार, एक साहसी प्रकृति। मंगल ग्रह घर के भीतरी हॉल और गृह स्वामी के शयनकक्ष व अतिथि कक्ष का भी प्रतिनिधित्व करता है। दक्षिण में अधिक खाली स्थान छोड़ना तथा जल निकासी अशुभ है। जैसा कि वास्तुरत्नावली एवं वृहद्वास्तुमाला में कहा गया है- "दक्षिणप्लवना पृथ्वी नराणां मृतिदा भवेत्"।।

भूखण्ड की लम्बाई उत्तर-दक्षिण की अपेक्षा पूर्व-पश्चिम में अधिक होनी चाहिए अर्थात् भूमि दक्षिण-दक्षिण से कम है तो यह शुभ संकेत है। लेकिन अगर यह उत्तर-पश्चिम और उत्तर- पूर्व से कम हो तो आग का कारण बन सकता है दुर्घटनाओं, आपराधिक मन , यदि यह पूर्वोत्तर और उत्तर-पश्चिम से अधिक है तो यह धन को आकर्षित करता है।

दक्षिण-पश्चिम -दक्षिण-पश्चिम/ Southwest (नैर्ऋत्य कोण) का रक्षक देवता नैर्ऋति है जो रुद्रों में से एक है। नैर्ऋत्य दिशा सभी प्रकार की आपदाओं से जुड़ा हुआ है, जुआ और चरित्र जैसे विकार, सभी प्रकार की परेशानी, बुरे सपने, बीमारी। दक्षिण-पश्चिम का ग्रह राहु है। आफिस दक्षिण एवं नैर्ऋत्य के मध्य में, शौचालय दक्षिण- नैर्ऋत्य के मध्य व शौच के समय मुख पूर्व की ओर न करकर मुख उत्तर या दक्षिण की ओर करना चाहिए। तथा यह जुआ, अपशिष्ट सामग्री, प्रदूषण का प्रतिनिधित्व करता है और मुख्य द्वार। नैर्ऋति को नकारात्मक प्रभाव से दूर रखने के लिए दक्षिण-पश्चिम को ऊँचा और भारी रखना

चाहिए । जैसा कि वास्तुरत्नावली एवं वृहद्वास्तुमाला में कहा गया है- गृहक्षयकरी सा च भूमिर्या नैर्ऋतप्लवा।।

इसमें सीढ़ी, बेडरूम, स्टोर रूम, यन्त्र की दुकान आदि के निर्माण के लिए एक आदर्श स्थान है। **(गेहाधीशयदृच्छया च शयनं सर्वासु भूमीषु च) राजवल्लभमण्डन** दक्षिण-पश्चिम शौचालयों के निर्माण, भारी वस्तुओं का स्टोर ,अपशिष्ट सामग्री के भंडारण आदि के लिए भी यह एक अच्छी दिशा है। छत के ऊपर पानी की टंकियाँ दक्षिण अथवा पश्चिम में श्रेष्ठ रहती हैं।

दक्षिण-पश्चिम में दोष धीमी गति से कार्य करते हैं, अपने परिणामों में दूरगामी होते हैं और जल्दी प्रतिक्रिया नहीं देते हैं।

पश्चिम-पश्चिम का स्वामी वरुण है, जो पाचन शक्ति सही रखता है अतः भोजनकक्ष पश्चिम में बनाना श्रेष्ठ है। बृहस्पति आहार दोषों का परिहार करते है। संतान हेतु गुरु और बुध का स्थान अध्ययन और शयन कक्ष के लिए पश्चिम एवं नैर्ऋत्य उत्तम है और अध्ययन के समय पूर्व व उत्तर की ओर मुख रखना चाहिए लेकिन पुस्तकों को नैर्ऋत्य में नहीं रखना चाहिए। घर के पश्चिम का स्वामी वरुण है। ऋग्वेद में वरुण एक सम्राट है, जो सभी क्षेत्रों के राजा हैं। वरुण के पवित्र कार्य हैं। वह सभी अनंतों का स्वामी है, तथा पश्चिम में वास्तु दोष सभी प्रकार की साझेदारी से सम्बन्धित समस्याओं का परिणाम हो सकता है। व्यापार साझेदारी, जीवनसाथी और दोस्तों के साथ गलतफहमी, कानूनी मामले, मुकदमेबाजी आदि। जैसा कि वास्तुरत्नावली, ज्योतिर्निबन्ध एवं वृहद्वास्तुमाला में कहा गया है-"धनहानिकरी चैव कीर्तिता वरुणप्लवा। -अर्थक्षयकरी विद्यात् पश्चिमप्लवना ततः"।।

उत्तर-पश्चिम- North West (वायव्य) उत्तर-पश्चिम दिशा का ग्रह चन्द्रमा है। चन्द्रमा जल, मन, हृदय, चाँदी, महत्त्वपूर्ण ऊर्जा का प्रतिनिधित्व करता है, माँ, बेटी, अच्छा पोषण, जीवन की अच्छी चीजें, तालाब। चन्द्रमा खिड़कियों का भी प्रतिनिधित्व करता है और घर के सामने की बाईं ओर की खिड़की व पूजा कक्ष है, तो उसके स्वामी को दिव्य वरदान प्राप्त होगा लेकिन कमरों में सूर्य की रोशनी नहीं पहुचेगी तो महिलाएँ पीड़ित व अस्वस्थ रहेगी। उत्तर-पश्चिम दिशा का रक्षक वायु है, वेद वायु में ब्रह्माण्डीय श्वास है। मनुष्य में वायु का प्रतिनिधित्व प्राण द्वारा किया जाता है जो इसके लिए जिम्मेदार है।

उत्तर-पश्चिम (वायव्य) दिशा में अध्ययन कक्ष, गेराज, पशुशाला, नवदम्पति शयन कक्ष, विवाह योग्य युवतियों के कमरे के निर्माण के लिए आदर्श है। अतिथि कक्ष, इस दिशा में शौचालय बना सकते हैं लेकिन शौच के समय मुख पूर्व की ओर न कर मुख उत्तर या दक्षिण की ओर रखें तथा उसका गन्दा जल घर से बाहर वायव्य से निकाल सकते है। तैयार वस्तुओं के लिए गोदाम और ऐसी चीजें जो आप जल्द ही स्थानांतरित करना चाहते हैं। यदि उत्तर-पश्चिम पूर्व की तुलना में कम है तो इसके परिणामस्वरूप प्रतिद्वंद्विता और रोग होते हैं। सर्वोत्तम परिणामों के लिए यह इन से अधिक होना चाहिए लेकिन दक्षिण-पश्चिम और दक्षिण-पूर्व से कम। "वायुप्लवा तथा भूमि र्नित्यमुद्वेगकारिणी"।।

उत्तर-उत्तर- महत्वपूर्ण दिशा है। देवालय भी उत्तर में शुभ होता है। वह जो उत्तर में है वह ओमकार है, सर्वव्यापी, अनंत है। परब्रह्म, एक, रुद्र, ईशान, महेश्वर इस दिशा का ग्रह बुध है। बुध दर्शन, शिक्षा, लेखन, ज्योतिष, प्रार्थना, परिवार की समृद्धि और उसकी समृद्धि। क्योंकि बुध संचार का प्रतिनिधित्व करता है, इसलिए घर में बुध हॉल का प्रतिनिधित्व करता है जहाँ मित्र और रिश्तेदार मिलकर चर्चा करते हैं। आफिस उत्तर एवं ईशान के मध्य में तथा कुमारी युवतियों के लिए शुक्र- चन्द्रमा का स्थान, खजाने का भी प्रतिनिधित्व करता है जहाँ गहने और दस्तावेज आदि रखे जाते हैं। क्योंकि बुध संचार का प्रतिनिधित्व करता है, अंधकार युक्त ड्राइंग रूम या केंद्रीय हॉल के अनैतिक मामलों को चिह्नित करता है और परिवार में अनेक तरीकों से धनार्जन के रक्षक उत्तर के देवता कुबेर हैं उत्तर जितना अधिक खुला होगा, उतना अधिक समृद्ध परिवार होता है अतः नकद, कैशबॉक्स आदि उत्तर में ही रखे जाएँ।

भूखण्ड का ढ़लान पूर्व एवं उत्तर की ओर शुभ होता है, पश्चिम एवं दक्षिण की ओर कभी भी नहीं करना चाहिए। भूखण्ड के बीच में पश्चिम, नैर्ऋत्य, आग्नेय, वायव्य एवं दक्षिण में कुँआ, बोरिंग, भूमिगत टंकी, सैप्टिक टैंक अथवा किसी प्रकार का टैंक होना अशुभ होता है परन्तु आवास से बाहर गन्दा पानी निकालने की व्यवस्था इस दिशा से शुभ है "उत्तरा धनदा स्मृता"। भवन बनाते समय भूखण्ड पर पश्चिम की अपेक्षा पूर्व मै और दक्षिण की अपेक्षा उत्तर में अधिक खाली जगह छोडनी चाहिए। **सोमे च मुख्यके वापि रत्नहेमादिकालयम्। (मानसार)**

वराहमिहिर एवं भोजराज के अनुसार भवन के मध्य में एकाशीतिपद वास्तुचक्र में नौ पद ब्रह्मा के होते हैं, इनमें वास्तु पुरुष का शिर, मुख, हृदय, नाभि एवं दोनों स्तन मर्म स्थानों पर कुँआ व भूमिगत गृह का निर्माण नहीं करना चाहिए।

गृहकक्षविभाग-

वास्तुशास्त्र में दिक्साधन का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वास्तुक्षेत्र में किस दिशा में देवतागृह, धनसञ्चय, आयुधाश्रय,स्नानगृह, भोजनादि की व्यवस्था कहाँ- कहाँ करनी चाहिए? अतः गृहकक्षविन्यास का राजाओं एवं सामान्यजन की सुख-समृद्धि में महत्त्वपूर्ण भूमिका है। यथा-

पूर्वस्यां श्रीगृहं प्रोक्तमाग्नेयां स्यान्महानसम्।।

शयनं दक्षिणस्यां च नैर्ऋत्यामायुधाश्रयम्।

भोजनं पश्चिमायां च वायव्यां धनसञ्चयम्।।

उत्तरे द्रव्यसंस्थानमैशान्यां देवतागृहम्।

इन्द्राग्नयोर्मध्ये मथनं यमाग्नयोर्घृतमन्दिरम्।।

यमराक्षयोर्मध्ये पुरीषत्यागमन्दिरम्।

राक्षशजलयोर्मध्ये विद्याभ्यासस्य मन्दिरम्।।

तोयेशानिलयोर्मध्ये रोदनसय च मन्दिरम्।

कामोपभोगशयनं वायव्योत्तरयोर्गृहम्।।

कौबेरेशानयोर्मध्ये चिकित्सामन्दिरं सदा।

पुरन्दरेशयोर्ममध्ये सर्ववस्तुषु संग्रहम्।।

सदनं कारयेदेवं क्रमादुक्तानि षोडश।

नैर्ऋत्यां सूतिकागेहं नृपाणां भूतिमिच्छता।।बृ.वा.मा.150-155।।

ऐशान्यां देवगृहं महानसं चापि कार्यमाग्नेय्याम्।

नैर्ऋत्यां भाण्डोपस्करोऽर्थधान्यानि मारुत्याम्॥116 ॥

ईशान कोण में देवगृह, अग्नि कोण में पाकगृह, नैर्ऋत्य कोण में गृहसामग्री गृह एवं वायव्य कोण में धन-धान्य के लिए कक्ष बनाना चाहिए।

पाकशाला- रसोईघर(Kitchen) सदैव आग्नेय कोण (दक्षिण-पूर्व)में ही निर्माण करना चाहिए है लेकिन आग्नेय कोण में सम्भव न हो तो पूर्व एवं वायव्य कोण (उत्तर-पश्चिम) में सामान्य रूप से निर्माण कर सकते हैं। गैस चूल्हा रखने के लिए दक्षिण और पश्चिम दीवारों के सहारे व्यवस्था इस प्रकार करें कि भोजन बनाते समय मुख सदैव पूर्व की ओर रहे। जल व्यवस्था ईशान कोण में, सिंक के पानी निकलने के लिए व्यवस्था ईशान (उत्तर-पूर्व) की ओर, गैस सिलेण्डर रखने के लिए आग्नेय कोण तथा पश्चिम या उत्तर दिशा में रेफ्रिजरेटर और वर्तन रखने की व्यवस्था दक्षिण, नैर्ऋत्य कोण या फिर पश्चिमी दिशा में करनी चाहिए। **पूर्वाश्रिते भोजनमन्दिरं च महानसं वह्निदिशाविभागे। (राजवल्लमण्डन)**

6.2 बंग्ला एवं सरकारी आवास (राजगृहविन्यास)- पुर के तृतीय अथवा चतुर्थांश भाग पर राजाओं या फिर उनके अधिकारियों के लिए आवास या गृह बनाना चाहिए, इस आवास के पश्चिम या उत्तर दिशा में भूमि के अनुसार लघु दुर्ग भी बनाना चाहिए। जैसा कि वास्तुमण्डन में कहा गया है-

एकद्वित्रिसहस्रेषु हस्तै राजगृहं त्रिधा।

तुङ्गराजगृहं रम्यं मन्दिरोद्यानदीर्घिकाः ॥ 10 ॥

एक हजार, दो हजार और तीन हजार हाथ के मान से राजाओं के लिए तीन प्रकार के भवन बनाने चाहिए। राजगृह की ऊँचाई अधिक हो एवं उसमें सुन्दर मन्दिर, उद्यान और सरोवर का भी निर्माण करना चाहिए।

राजनिवास में गोपुर

राजमहल में तीन प्राकार हों और वे तीनों प्राकार परिखा सहित होने चाहिए, इसमें चार गोपुरों का निर्माण करना चाहिए। मुख्य गोपुर के द्वार का मुख पूर्व या दक्षिण दिशा में होना चाहिए लेकिन उत्तर व पश्चिम दिशा में श्रेष्ठ नहीं है। जैसा कि वास्तुमण्डनकार ने कहा है

त्रिप्राकारं सपरिखं स्याच्चतुर्गोपुरं वरम्।

पूर्वास्यं दक्षिणास्यं चानोदक् प्रत्यग्दिशि मुखम् ॥11॥

इसी प्रकार मयमत में उल्लेख है कि महल के लिए तीन परकोटे, तीन रास्ते एवं तीन भाग के घेरे होने चाहिए। गोपुर चार से अधिक नहीं होने चाहिए। मुख्य गोपुर ऊँचा तथा पश्चिम का गोपुर नीचा रखा होना चाहिए। मुख्य गोपुर का मुख पूर्व व दक्षिण की ओर हो, लेकिन उत्तर अथवा पश्चिम में मुख शुभ नहीं होता है।

त्रिप्राकारं त्रिपथं त्रिभागयुग्धीन नृपभवनम्।

सचतुर्गोपुरकान्तं मुखगोपुरमुन्नतं हि तत्रैव॥

निम्न पश्चिमवेशं मुख्यं स्यात् प्राङ्मुखं भवनम्।

दक्षिणमुखमपि वाऽथ नोदक् प्रत्यदिग्दिशि सुभद्रमुखम् ॥

पञ्चमुखं त्वथ राज्ञां नेष्टं स्याद् वेशनं च यत्तत्स्यात् ।(मयमतम् 29, 22-24)

राजनिवास के लिए इक्यासी पद वास्तुमण्डल बनाकर उसके मध्य में ब्रह्मा का पद तत्पश्चात् भवन मण्डप, द्वार, गृह और सभा आदि का विन्यास करना चाहिए। जैसा कि मण्डन ने कहा है-

एकाशीतिपदे क्षेत्रे मध्ये ब्रह्मपदेकणम्।

मण्डपं वा न्यसेद्रम्यमार्ये द्वारं गृहं सभा ॥5.12॥

एकाशीतिपदे वास्तु ब्रह्मा मध्ये नवांशकैः।

षट्पदा अर्यमाद्याः सार्ध्वेशा कोणेषु मध्यतः।।

सर्वेऽपि भागिका बाह्यो देवाः ईशादयश्चैककादशः।।(वास्तुमण्डन1. 113)

समराङ्गसूत्रधार के अनुसार राजगृह

ईशान कोण पूर्व आग्नेयकोण

शिखी-मन्दिर	पर्जन्य-ज्योतिषी	जयन्त-सेनापति	इन्द्र	सूर्य	सत्य-न्यायधिकारी	भृश-शस्त्रागार	अन्तरिक्ष-गोशाला	अनिल-महानस
दिती-मातुलगृह, सामन्तगृह	आप हाथीगृह	जयन्त	इन्द्र	सूर्य	सत्य	भृश	सावित्र-वाद्यशाला	पूषा,भोजनशाला

अदिति- अध्यनशाला,राजमाताकक्ष	अदिति	आपवत्स- जलाशय,वन	अर्यमा - द्वार	अर्यमा	अर्यमा	सविता- गायक	वितथ- चर्मकार	वितथ
भुजग- दानकक्ष, अध्ययनकक्ष	भुजग	पृथ्वीधर	ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विवश्वान- वाहनशाला	बृहक्षत	बृहक्षत- स्वर्णकार
सोम- प्रधानमन्त्री	सोम	पृथ्वीधर	ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विवश्वान	यम	यम-बन्दीगृह
भल्लाट गोशाला	भल्लाट	पृथ्वीधर	ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विवश्वान	गन्धर्व	गन्धर्व- प्रेक्षागृह
मुख्य- व्यायामशाला,नाट्य	मुख्य	राजयक्ष्मा- दारुकर्मान्त	मित्र	मित्र	मित्र	इन्द्र- अन्तःपुर	भृङ्गराज	भङ्गराज- राजकुमारी,झूला
नाग हाथीशाला	रुद्र- भाण्डागार	शोष	असुर	वरुण	कुसुमदन्त	सुग्रीव- अशोकवाटिक	जय- अन्तःपुर	मृग-अन्तःपुर
रोग- औषधालय	पापयक्ष्मा - ऊलूखल	शोष- आयुद्धगृह	असुर- बारूद	वरुण- वापी,पान	कुसुमदन्त -फैक्ट्री	सुग्रीव	दौवारिक	पिता- अन्तःपुर

वायव्य कोण पश्चिम नैर्ऋत्य

विवस्वान् के स्थान पर अभिषेकस्थल, मित्र के स्थान पर मुख्य गृह, पृथ्वीधर के स्थान पर सभा एवं भाण्डागार का निर्माण करना चाहिए।

विवस्वत्यभिषेकार्हं मित्रे मुख्यं गृहं न्यसेत्।

पृथ्वीधरे सभामाये भाण्डागारं प्रकारयेत् ॥ 13 ॥

आपवत्स के स्थान पर वस्त्रागार, सावित्र के स्थान पर भोजनगृह और सविता के स्थान पर व्यञ्जनों के लिए महानस बनाना चाहिए।

आपवत्सेम्बरागारं सावित्रे भोजनास्पदम्।

कुर्यात्सवितरि श्रेष्ठं सव्यञ्जनं महानसम् ॥ 14॥

इन्द्र के स्थान पर राजा की माता के लिए कक्ष, महेन्द्र स्थान पर राज उपस्कर का, रुद्र के दोनों स्थानों पर राजमहिषी एवं राजपरिवार की अन्य स्त्रियों के लिए गृह का निर्माण करना चाहिए।

इन्द्रो राजाम्बिकागेहमिन्द्रराज उपस्करः।

रुद्रद्वये महिष्याश्च राजस्त्रीणां गृहा अपि ॥ 15 ॥

ईश के स्थान पर मन्दिर का निर्माण करना चाहिए और देवताओं का मुख दक्षिण या पश्चिम दिशा होना चाहिए तथा पर्जन्य के स्थान पर पीछे की ओर से राजा एवं अन्य व्यक्तियों को प्रवेश करना चाहिए।

ईशे सुरालयं याम्याननं वा पश्चिमामुखम्।

पराङ्मुखं तु पर्जन्ये राजाधिकरणं न्यसेत्।।15।।

जय के स्थान पर लक्ष्मी जी का देवालय, कोणों में अनेक प्रकार से अभ्यास मण्डप एवं दीर्घिका, इन्द्रकोण में शस्त्रगृह, सूर्य के स्थान पर व्यय या आंगन बनाना चाहिए।

जये श्रीकरणानेकाभ्यासमण्डपदीर्घिकाः।

शक्रे कर्ण शस्त्रगृहं सूर्ये व्यये गृहाङ्गणे।।16।।

सत्य के स्थान पर पराङ्मुख धर्माधिकारी का और अध्ययन, भृश के स्थान पर अन्नागार और अग्नि के स्थान पर महानस का निर्माण करना चाहिए।

सत्ये पराङ्मुखो धर्माधिकाराऽध्ययनालये।

भृशेऽन्नगेहव्यापारं व्योम्नि मुख्यं महानसम्।28।।

मयमत में वर्णन है-

अर्यांशे द्वारहर्म्यं स्याच्चेन्द्रे सूर्येऽङ्गणं भृशम्॥

भृशे व्योम्नि च वृत्तं स्यात् पूष्णे हेमं सदक्षिणम्। (मयमतम् 29, 30-31)

वह्नौष्कान्नगोस्थानं पूष्णिषभ्यासनालयम्।

वितथे वर्मवल्लूराऽयुधानां भोजनस्य च ॥19॥

वह्नि के स्थान पर अन्न और गोस्थान, पूषा के स्थान पर अभ्यासालय, वितथ के स्थान पर योद्धाओं के लिए आयुधशाला एवं भोजनगृह का निर्माण करें।

गृहक्षतं कर्णं कुर्याद्रक्षकाणां च संश्रयम्।

यमे सेनेक्षणावासं गन्धर्वे रतिनृत्ययोः॥20॥

गृहक्षत के स्थान पर पुररक्षकों के आश्रय स्थल, यम के स्थान पर सैन्याधिवास, गन्धर्व के स्थान पर रतिगृह और नृत्यशाला का निर्माण करना चाहिए।

भृङ्गे रथानथ मृगे देहचिन्तापदं बहिः।

पित्र्ये स्नानालयं द्यूतं द्वाःस्थे सलिलकेलयः ॥ 21॥

भट्ट के स्थान पर रथ, मृग के स्थान पर बाहर चिन्तागृह, पितृ के स्थान पर स्नानागार एवं द्यूतभवन, द्वास्त या दौवारिक के स्थान पर जलक्रीडा का निर्माण करना चाहिए।

पितरि स्थानहर्म्यं स्याद् दौवारिकसुकण्ठयोः।

जललीला विधातव्या पुष्पदन्ते खलुरिका ॥ (मयमतम् 29, 33-34)

यद्वायुद्यालकेनाथं भिट्ट गजसमोच्छ्रयम्।

नानायुद्धगृहं तत्र प्रकुर्वीतूत्तरामुखः ॥ 22॥

वायु के स्थान पर उद्यालक और गज की भाँति ऊँचें भिट्टों का निर्माण करना चाहिए। वहाँ नाना प्रकार के उत्तराभिमुख युद्धगृह बनाने चाहिए।

कार्यं दौवारिके भिट्ट गजस्कन्धसमोच्छ्रितम् ।

द्वाराग्रे तु भवेन्माडं मल्लैरग्रे तु युध्यते ॥ (अपराजित. 76, 24)

सुग्रीवे मल्लयुद्धार्हं पुष्पदन्ते खलूरिकाम्।

वरुणे युवराजस्याऽसुरे धान्येन्द्रजालयोः ॥ 23॥

सुग्रीव के स्थान पर मल्लों के लिए व्यायामशाला, पुष्पदन्त के स्थान पर खलूरिका, वरुण के स्थान पर युवराज भवन और असुर के स्थान पर धान्य एवं इन्द्रजाल भवन का निर्माण करना चाहिए।

शोषे शस्त्रविषस्त्रीणां रोगे तर्दौशिकोधरम्।

वायौ खरोष्ट्रो नागे तु धात्री सैरन्ध्रिदीर्घिकाः॥ 24॥

शोष के स्थान पर शस्त्रास्त्र और विषकन्याओं का स्थान बनायें, रोग के स्थान पर शिकोधर भवन, वायु के स्थान पर घोड़े एवं ऊँटशाला, नाग के स्थान पर धात्री भवन या सैरन्ध्री भवन का निर्माण करना चाहिए।

अन्तर्विवृत्तवेशार्थं रोगांशे च समीरणे।

वर्धमानादिकं चापि शालानां पादशालकम्।

नागे सैरन्ध्रिधात्रीणां मुख्ये कन्यागृहं भवेत् ।(मयमतम् 29, 37-38)

मुख्ये कन्यागृहं कुर्याद्भल्लाटे श्वेभभेषजम्।

सोमे संवाहिकाः शैले मलस्थानं रजस्वलाः॥ 25 ॥

मुख्य के स्थान पर कन्या, भल्लाट के स्थान पर श्वेभ, चिकित्सालय, सोम स्थान पर संवाहकों, शैल और गिरि के स्थानों पर मलस्थान या रजस्वला के वास की व्यवस्था करनी चाहिए।

भैषज्यं चापि भल्लाटे मृगे सांवाहिकागृहम्।

रुचकादिचतुः शालाविमानं वात्र योजितम्॥ (मयमतम्)

अदिति पर स्नान एवँ सूत भवन, दिति के स्थान पर कवियों का भवन, आदित्य पर गर्मजल के हौद एवं मसाज गृह, पूर्व में सभास्थान के दोनों ओर बलाबल के लिए निर्माण करें।

अदितौ स्नानसूतानामदित्यामुष्णाम्बुमर्द्दने।

पूर्वे कर्णसभास्थानं पार्श्वयुग्मे बलाबलम् ॥ 26 ॥

अभितो मज्जनागार मुदित्यामापवत्सयोः।

पानीयोष्णोदकं धाम यच्च प्रासादवद्वधैः ॥ (मयमतम् 29, 39-40)

राजाओं को हर्म्य के लिए विशेषरूप से शक्र के पद पर द्वार बनवाना उत्तम है, इसको तीन या पाँच भूमियों से युक्त कर मुख्य अथवा गृहक्षत के स्थान पर्यन्त निर्माण करना चाहिए।

राज्ञां विशेषतः शक्रो प्रयुक्तं द्वारमुत्तमम् ।

त्रिः पञ्चभूमिकं मुख्ये योजयेद्वा गृहक्षते ॥ 27 ॥

पुष्पदन्त एवं भल्लाट के स्थान पर द्वार नीचतलान्वित करना चाहिए। नृप के अनकूल विमान एवं तोरण आदि की संरचना करनी चाहिए। अन्तःपुर की स्त्रियों का आवास और शयन भवन के मध्यभाग में होने चाहिए।

पुष्पदन्ते च भल्लाटे द्वारं नीचतलान्वितम्।

नृपचित्तवशाद्वारं विमानानि च तोरणम् ॥27॥

स्त्रीणां निवासं शयनं कुर्युर्मध्ये च कारयेत्।

पूर्वे द्वारं गृहं कुर्यादात्स्थानं पृथु चाङ्गणम्।

अग्नौ महानसे धेनुमहिषीव्यञ्जनालयम् ॥ 3॥

गृह के द्वार से पूर्व विस्तृत आङ्गन रखें, आग्नेयकोण में महानस और इसी प्रकार वहाँ गौशाला, भैंस का तबेला, व्यञ्जनालय भी बनवाना चाहिए।

याम्ये जलगृहं नृत्यशालां भोजनमन्दिरम्।

नैर्ऋत्ये स्नानसूतानां देहचिन्तापदं बहिः ॥4॥

दक्षिण दिशा में जलगृह, नृत्यशाला तथा भोजन मन्दिर, नैर्ऋत्य कोण में स्नानगृह, सूतिकागृह बनाना चाहिए परन्तु बाहर रोदनगृह का निर्माण करें।

पश्चिमे दीर्घिकास्थानं वायोस्नेहान्नयोगृहम्।

सौम्ये धनाङ्गनोऽद्यानास्थानमीशे सुरालये ॥ 5॥

पश्चिम में दीर्घिका (सरोवर,) वायव्य में मसाजगृह एवं अन्नगृह, उत्तर दिशा में धनागार, आङ्गन तथा उद्यान और ईशानकोण में देवालय का निर्माण करना शुभ होता है।

मध्ये मुख्यगृहं स्वामी वाञ्छयाशयनास्पदम् ।

मध्य में गृहस्वामी का गृह बनायें और इच्छा होने पर उसे शयन के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

पश्चिमे स्याद् गृहं देवाः स्थाप्या वा दक्षिणामुखा ॥ 6 ॥

याम्योत्तरास्या गावः स्युर्न प्राक्पश्चिमतो मुखाः ॥7॥

पश्चिम में देवगृह का निर्माण करना चाहिए, जिसमें प्रतिमाओं को दक्षिणमुखी स्थापित करना चाहिए। गावीशाला दक्षिणोत्तर हो, जिसमें उनको पूर्व-पश्चिम मुख से रखना चाहिए।

वामाङ्गे गृहस्य वीक्षविधानम् वस्त्रशस्यार्थं देवार्चाभिषगालयम्।
दक्षिणे दीपमधाने तोयोच्छिष्टपदं न्यसेत् ॥ 8 ॥

गृह के वामभाग (उत्तर दिशा) में वस्त्रागार एवं देवार्चा और औषधकक्ष का निर्माण करना चाहिए। दक्षिण में दीपाधार रखें और उसको इच्छित पद से विनिवेशित करें।

पुरादौ त्रिचतुर्थांशे कारयेद्राजमन्दिरम्।
पश्चिमे सौम्यतावापि लघुदुर्गेषु भूवशात् ॥9॥

6.3 अतिथिशाला, सभागार- उत्तर, ईशान कोण पूर्व की ओर अर्थात् पूर्व दिशा में ,उत्तर से वायव्य कोण की ओर श्रेष्ठ होता है, इसमें मनोरंजन कक्ष एवं अतिथिकक्ष शुभ होता है, इस कक्ष की इन दिशाओं में द्वार, खिड़की–रोशनदान तथा घड़ी, दक्षिण- पश्चिम की दीवारों पर आलमारी तथा अन्य सौन्दर्यवर्धक फर्नीचर लगाना चाहिए। अतिथिकक्ष में बैठने की व्यवस्था गृहस्वामी के लिए पूर्व-उत्तर में एवं अतिथियों के लिए दक्षिण- पश्चिम में सोफादि की व्यवस्था पश्चिम और दक्षिण दिशा में करनी चाहिए। शयन लिए व्यवस्था ऐसी होने चाहिए कि सोते समय अतिथि का शिर दक्षिण या पूर्व की ओर हो। मनोरंजन के लिए टी.वी. आदि आग्नेयकोण, पश्चिम एवं वायव्यकोण में व्यवस्था करनी चाहिए। अतिथिकक्ष का प्रवेश द्वार पूर्व या उत्तर में उत्तम रहता है।

धान्यगोगुरुहुताशसुराणां न स्वपेदुपरि नाप्यनुवंशम्।
नोत्तरापरशिरा न च नग्नो नैव चार्द्रचरणः श्रियमिच्छन् ॥122॥

श्री की कामना करनेवाले मनुष्यों को अन्न, गौ, गुरु, अग्नि एवं देवताओं के ऊपर शयन नहीं करना चाहिए। उत्तर या पश्चिम की ओर शिर करके भी शयन नहीं करना चाहिए और जल से भीगे हुए पैरों से विस्तर पर शयन नहीं करना चाहिए।

7 **मार्ग के अनुसार भूखण्ड विचार-** भूखण्ड के जिस ओर मार्ग हो उसी मार्ग के अनुसार भूखण्ड की दिशा का निर्णय किया जाता है। जैसे भूखण्ड के पूर्व की ओर मुख्य मार्ग हो तो वह भूखण्ड पूर्वमुखी भूखण्ड कहलाएगा।

क्र.सं.	मार्ग	शुभाशुभ निर्णय
1	पूर्व	शुभ
2	दक्षिण	शुभ
3	पश्चिम	शुभ
4	उत्तर	शुभ
5	उत्तर- पूर्व	शुभ
6	पूर्व- दक्षिण	अशुभ
7	दक्षिण- पश्चिम	अशुभ

दो दिशाओं के मार्गवाले भूखण्ड-

क्र.सं.	मार्ग	शुभाशुभ निर्णय
1	पूर्व- पश्चिम	शुभ
2	पूर्व-दक्षिण	अशुभ
3	उत्तर-दक्षिण	अशुभ
4	उत्तर-पश्चिम	शुभ
5	उत्तर- पूर्व	शुभ

राजोचित जलयन्त्रनिर्माण-

क्षेत्रं सप्तविभागभाजितमतो भद्रं च भागत्रयं

तन्मध्ये जलवापिका जिनपदैरेकांशतो वेदिका ।

स्तम्भैर्द्वादशभिश्च मध्यरचितः कोणेषु रूपान्वितः

कर्तव्यो जलयन्त्र एष विधिवद्भोगाय पृथ्वीभुजाम् ॥35॥

राजाओं के लिए जलयन्त्र का निर्माण बनाने के स्थान को 7x7=49 भागों में बाँटकर, इसके मध्य में चारों ओर तीन भाग में चबूतरा, मध्य के 24 भाग में जल की टंकी बनाकर, इसके कोणों में नक्कासी करानी चाहिए। इस प्रकार के फुहारे राजाओं के मनोरंजन के लिए होते हैं।

इकाईः7.भवन विन्यास वास्तु

पिछली इकाइयों के अध्ययन के समय हमने सीखा कि वास्तु में दिशाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। अतः दिशाओं के अनुसार ही हमें भवन अन्य कक्षों का निर्माण करना चाहिए। जैसे कि अगर द्विशाल अर्थात् दो कमरों का निर्माण करना हो तो प्रथम कक्ष दक्षिण में एवं द्वितीय कक्ष का निर्माण पश्चिम में करना चाहिए। इसी प्रकार तृतीयशाला उत्तर दिक् में एवं चौथा कमरा पश्चिम दिशा के मध्य में करना चाहिए। जैसा कि विश्वकर्माप्रकाश में उल्लेख है-

द्विशालानिगृहाणि याम्यशालां न्यसेदादौ द्वितीया पश्चिमे ततः।

तृतीया चोत्तरे स्थाप्या चतुर्थी पूर्वपश्चिमा ।।171

प्रवेशद्वार-

भवन में द्वार की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। यह गृह का मुख होता है। अतः इसकी स्थापना वास्तुनियमानुसार करनी चाहिए। जैसे कि गृहस्वामी के गृह में प्रवेश करते समय दाएँ हाथ की ओर प्रवेशद्वार होना चाहिए। (समराङ्गण सूत्रधार48.69)

वास्तुनिर्माण से पहले भूमि के 64 भाग करने पर जो भाग प्राप्त होता होता है उसे पद कहते हैं। इन प्रत्येक पदों के देवता होते हैं। आचार्यों ने इन्हीं 'वास्तुमण्डल' के पदों पर द्वार के शुभाशुभ पदों का वर्णन किया है-

पूर्व दिशा की ओर जयन्त पद पर, दक्षिण में विनय पद पर पश्चिम पुष्पदत्त एवं उत्तर में भल्लाट पद पर द्वार का निर्माण करना चाहिए।(मत्स्यपुराण 255.8-9) लेकिन पूर्व की ओर महेन्द्र पद द्वार स्थापित करना चाहिए। (समराङ्गण सूत्रधार 24.35-41) जयन्त, महेन्द्र, विनय, पुष्पदन्त, मुख्य, भल्लाद, सोम और अदिति इन पदों पर द्वार निर्माण कर सकते हैं। (विश्वकर्मा प्रकाश 7.912-920) पञ्च पुरुषों के लिए उत्तर में भल्लाट अथवा मुख्य पद पर द्वार रखना भी अच्छा है अन्य किसी भी पद पर श्रेष्ठ नहीं होता है। (वास्तुविद्या (4.3-4)

भोजराज के अनुसार चौकोर अथवा आयताकार नगर होता है। इस क्षेत्र को 64 वास्तुमण्डल के स्वरूप के अनुसार ब्राह्मण का गृह नगर में यदि भल्लाद, कुबेर चरकी अथवा पृथ्वीधर

वास्तुमण्डल के पद पर हो तो द्वार महेन्द्र पद, क्षत्रिय के लिए नगर में महेन्द्र, सूर्य, सोम अथवा अर्यमा पद पर भवन हो तो द्वार गृहक्षत पद पर, वैश्य का गृह यम, बैवस्वत, गंधर्व या गृहक्षत पद पर हो, तो द्वार पुष्पदन्त पद, शूद्र का वरुण, पुष्पदन्त, मित्र या असुर पद भवन हो तो द्वार भल्लाट पद पर रखना चाहिए। (समराङ्गण सूत्रधार (39.1.6) इस प्रकार देश-काल के अनुसार पूर्वाचार्यों विस्तृत विचार शास्त्रों में उपलब्ध हैं- गृहनिर्माण के आरंभ के समय भाद्रपद, आश्विन या कार्तिक मास हो हो तो भवन का मुख्य द्वार पूर्व की ओर, मार्गशीर्ष, पौष या माघ में हो तो भवन का द्वार दक्षिण ओर, फाल्गुन, चैत्र एवं वैशाख मासों मे हो तो पश्चिम की ओर एवं ज्येष्ठ, आषाढ़ और श्रवण मास में गृह का निर्माण आरंभ हो तो उत्तर की ओर भवन का मुख्य द्वार होना चाहिए। (विश्वकर्मा प्रकाश 7.858)

7.1 द्वारनिर्माण-

नवगुणसूत्रविभक्तान्यष्टगुणेनाथवा चतुःषष्टेः।

द्वाराणि यानि तेषामनलादीनां फलोपनयः॥ (बृ.सं. 53.69)

इक्यासी पद में नवगुणित सूत्र से और चौंसठ पद में अष्टगुणित सूत्र से विभक्त होकर जो अनल आदि बत्तीस द्वार बनाए जाते हैं। अर्थात् भवन की चारों ओर की दीवारों को समान रूप से 8 भागों अथवा नौ भागों में विभाजित कर अधोलिखित फलादेश के अनुसार द्वार निर्माण करना चाहिए।

ईशान से लेकर पूर्व द्वार के फल-

अनिलभयं स्त्रीजननं प्रभूतधनता नरेन्द्रवाल्लभ्यम् ।

क्रोधपरतानृतत्वं क्रौर्यं चौर्यं च पूर्वेण॥ (बृ.सं. 53.70)

शिखी से लेकर अन्तरिक्ष तक आठ देवता पूर्व भाग में अवस्थित होते हैं, उनमें से शिखी के ऊपर द्वार स्थापित होगा तो गृहस्वामी को अग्निभय, पर्जन्य के ऊपर द्वार हो तो कन्याजन्म, जयन्त के ऊपर द्वार हो तो अत्यधिक धन की प्राप्ति, इन्द्र के ऊपर द्वार हो तो राजा की प्रसन्नता, सूर्य के ऊपर द्वार हो तो अधिक क्रोध , सत्य के ऊपर द्वार हो तो असत्य भाषण, भृश के ऊपर द्वार हो तो क्रूरता और अन्तरिक्ष के ऊपर द्वार का निर्माण करने पर तस्करी का भय बना रहता है।

दक्षिण दिशा के द्वार-

अल्पसुतत्वं प्रैष्यं नीचत्वं भक्ष्यपानसुतवृद्धिः।

रौद्रं कृतघ्नमधनं सुतवीर्यघ्नं च याम्येन॥ (बृ.सं. 53.71)

अनिल से मृग तक आठ देवता दक्षिण भाग में स्थित होते हैं। उनमें से अनिल के ऊपर द्वार हो तो अल्प पुत्रता, पौष्ण के ऊपर द्वार हो तो दासत्व, वितथ के ऊपर द्वार हो तो नीचता, बृहत्क्षत के ऊपर द्वार हो तो भोजन, पानवस्तु और पुत्रों की वृद्धि, याम्य के ऊपर द्वार हो तो अशुभ, गन्धर्व के ऊपर द्वार हो तो कृतघ्नता, भृङ्गराज के ऊपर द्वार हो तो निर्धनता और मृग के ऊपर द्वार हो तो पुत्र के बल का विनाश होता है।

पश्चिम दिशा द्वार-

सुतपीडा रिपुवृद्धिर्न सुतधनाप्तिः सुतार्थफलसम्पत्।

धनसम्पन्नृपतिभयं धनक्षयो रोग इत्यपरे।।(बृ.सं. 53.72)

पिता से पापयक्ष्मा तक आठ देवता पश्चिम भाग में स्थित रहते हैं। उनमें से पिता के ऊपर द्वार हो तो पुत्रों को पीड़ा, दौवारिक के ऊपर द्वार हो तो शत्रु की वृद्धि, सुग्रीव के ऊपर द्वार हो तो पुत्र और धन का लाभ, कुसुमदन्त के ऊपर द्वार हो तो पुत्र और धन-सम्पत्ति की प्राप्ति, वारुण के ऊपर द्वार हो तो धन-सम्पत्ति का लाभ, असुर के ऊपर द्वार हो तो राजभय, शोष के ऊपर द्वार हो तो धननाश तथा पापयक्ष्मा के ऊपर द्वार हो तो रोग की प्राप्ति होती है।

उत्तर दिशा के द्वार-

वधबन्धो रिपुवृद्धिः सुतधनलाभः समस्तगुणसम्पत् ।

पुत्रधनाप्तिर्वैरं सुतेन दोषाः स्त्रिया नैः स्वम्॥ (बृ.सं. 53.73)

रोग से लेकर दिति तक आठ देवता उत्तर भाग में स्थित होते हैं। उनमें से रोग के ऊपर द्वार हो तो मृत्यु और बन्धन, सर्प के ऊपर द्वार हो तो शत्रु की वृद्धि, मुख्य के ऊपर द्वार हो तो पुत्र और धन का लाभ, भल्लाट के ऊपर द्वार हो तो सम्पूर्ण शौर्यादि गुणों की सम्पत्ति, सोम के ऊपर द्वार हो तो पुत्र से द्वेष, अदिति के ऊपर द्वार हो तो स्त्री के द्वारा दोष तथा दिति के ऊपर द्वार हो तो निर्धनता होती है।

शुभाशुभ द्वार ज्ञान बोधक मण्डल

पूर्व

शिखि- अग्निभय	**पर्जन्य-** कन्याजन्म	**जयन्त-** अत्यधिक धन	**इन्द्र-** राजाप्रसन्नता	**सूर्य-** क्रोध	**सत्य-** असत्य भाषण	**भृश-** क्रूरता	**अन्तरिक्ष-** तस्करी	**अनिल -** अल्प पुत्र
दिति - **निर्धनता**								**पूषा-** दासत्व
अदिति- **स्त्रीदोष**								**वितथ-** नीचता
भुजग								**गृहक्षत-** भोजन
सोम- पुत्र द्वेष								**यम-** अशुभ
भल्लाट-शौर्य								**गन्धर्व-** कृतघ्नता
मुख्य -पुत्र और धन								**भृंगराज-** निर्धनता
सर्प- शत्रुवृद्धि								**मृग**
रोग-मृत्यु, बन्धन	**पापयक्ष्मा-** रोग	**शोष-** धननाश	**असुर-** राजभय	**वरुण-** सम्प-त्ति लाभ	**कुसुमदन्त-** पुत्र और धन-सम्पत्ति	**सुग्रीव-** पुत्र और धन लाभ	**दौवारिक-** शत्रु वृद्धि	**पिता-** पुत्र पीड़ा

पश्चिम

यदि दिशा की राशि कर्क, वृश्चिक एवं मीन राशि हो तो उत्तरदिशा में द्वार, मेष, सिंह एवं धनु राशि हो तो पूर्वदिशा, वृषभ,मकर एवं कन्या राशि हो तो दक्षिण दिक् में और तुला, कुम्भ एवं मिथुन राशि हो तो पश्चिम दिशा में द्वार प्रशस्त होता है। यथा-

कुलीरवृश्चिकौ मीन उत्तरद्वारसंस्थिता।

मेषसिंहधनुर्द्धारो पूर्वद्वारेषु संस्थिताः।।

वृषभं मकरं कन्या याम्यद्वारे समाश्रिता।

मिथुनं तुलाकुम्भौ च पश्चिद्वारमाश्रिताः।। विकर्माप्रकाश 2.29-30

द्वारवेध के फल-

मार्गतरुकोणकूपस्तम्भभ्रमविद्धमशुभदं द्वारम्।

उच्छ्रायाद् द्विगुणमितां त्यक्त्वा भूमिं न दोषाय।।(बृ.सं. 53.73)

यदि मार्ग, वृक्ष, दूसरे घर का कोना, कूप, खम्भा या भ्रम (जल निकलने की मोरी) से गृहद्वार विद्ध होता हो अर्थात् ये सब द्वार के सम्मुख हों तो अशुभ होते हैं। परन्तु गृहद्वार की जितनी ऊँचाई हो, उससे द्विगुणित भूमि को छोड़कर आगे वेध करते हुए भी इन मार्गादि का रहना दोषप्रद नहीं होता है।।

गृह द्वार के विशेष फल-

रथ्याविद्धं द्वारं नाशाय कुमारदोषदं तरुणा।

पङ्कद्वारे शोको व्ययोऽम्बुनिः स्राविणि प्रोक्तः।।

कूपेनापस्मारो भवति विनाशश्च देवताविद्धे।

स्तम्भेन स्त्रीदोषाः कुलनाशो ब्राह्मणाभिमुखे॥ (बृ.सं. 53.75-76)

यदि गृहद्वार मार्ग से वेधित हो तो गृहस्वामी की मृत्यु, वृक्ष से वेध हो तो बालकों में दोष, पङ्क (कीचड़) से वेध हो तो शोक, मोरी से विद्ध हो तो व्यर्थ खर्च, कूप से वेध हो तो मृगी रोग की उत्पत्ति, देवता की प्रतिमा से वेध हो तो गृहस्वामी का नाश, स्तम्भ से वेध हो तो स्त्रियों में दोष और ब्रह्मा के सम्मुख हो तो सम्पूर्ण फल का ही नाश करता है। समराङ्गणसूत्रधार में भी इसी प्रकार वर्णन प्राप्त होता है यथा-

विद्ध द्वार के परिणाम (स.सू.48.82-84)

वेध	फल	वेध	फल
चौराहा/ वल्मीक	प्रवास, नौकर समस्या	ध्वजा/प्रासाद/ उलूखल	धननाश
वृक्ष	शिशुओं में दोष	कीचड़	शोक
जल	व्यय	कूप	अपस्मार
देवमन्दिर	विनाश	खम्भा	स्त्रीसमस्या
ब्रह्मपद	कुलक्षय	मूलद्वार द्वार से	धनक्षय

अन्य द्वार के विषय में विशेष कथन -

उन्मादः स्वयमुद्घाटितेऽथ पिहिते स्वयं कुलविनाशः।

मानाधिके नृपभयं दस्युभयं व्यसनमेव नीचे च॥

द्वारं द्वारस्योपरि यत्तन्न शिवाय सङ्कटं यच्च।

आव्यात्तं क्षुद्भयदं कुब्जं कुलनाशनं भवति॥

पीडाकरमतिपीडितमन्तर्विनतं भवेदभावाय।

बाह्यविनते प्रवासो दिग्भ्रान्ते दस्युभिः पीडा ॥ (बृ.सं. 53.77-79)

जिस गृह के द्वार का किवाड़ विना खोले ही खुल जाए, उसमें रहनेवाले लोगों को उन्माद, अपने-आप बन्द हो जाए तो कुल का नाश, पूर्वकथित परिमाण से अधिक द्वार का परिमाण हो तो राजभय और प्रमाण से अल्प परिमाण वाला द्वार हो तो चोरभय एवं दुःख होता है। यदि एक घर के द्वार पर दूसरे खण्ड का द्वार पड़े तो शुभ नहीं होता। जिस द्वार की मोटाई अल्प हो, वह भी शुभ नहीं होता है। मृदङ्ग की आकृति वाला अति विपुल द्वार क्षुधा का भय करता है और कुबड़ा द्वार कुल का नाश करता है। यदि ऊपरी काष्ठ आदि के भार से दबा हुआ द्वार हो तो गृहस्वामी को पीड़ा देता है, भीतर की ओर झुका हुआ द्वार हो तो गृहस्वामी की मृत्यु कराता है, बाहर को झुका हुआ द्वार गृहस्वामी को प्रवासी बनाता है और दिग्भ्रान्त (जिस दिशा का द्वार हो, उससे भिन्न दिशा को देखता) हो तो गृहस्वामी को चोरों से खतरा रहता है।

मध्य में द्वार निषेध- मनुष्यों के गृह में मध्य में द्वार का निर्माण नहीं करवाना चाहिए। गृह के मध्य में द्वार कुल का नाश करता है।

मध्ये द्वारं न कर्तव्यं मनुजानां कथञ्चन।

मध्ये द्वारे कृते तत्र कुलनाशः प्रजायते।। स.सू48.58

द्वार की दिशा निर्धारण-

कन्यादित्रिषु पूर्वतो यमदिशि त्याज्यं च चापादितो

द्वारं पश्चिमतस्त्रिके जलचरात्सौम्ये रवौ युग्मतः।

तस्माद्वयस्तदिशा मुखं तु भवनद्वारादिकं हानिकृत्

सिंहे चाऽथ वृषे च वृश्चिकघटं याते हितं सर्वतः॥ (वास्तुराजवल्लभ 1.16)

कन्या, तुला एवं वृश्चिक राशि के सूर्य में पूर्व दिशा में, धनु, मकर और कुम्भ राशि के सूर्य में दक्षिण दिशा में, मीन, मेष एवं वृष राशि के सूर्य में पश्चिम दिशा में और मिथुन, कर्क एवं सिंह राशि के सूर्य में उत्तर दिशा में वत्स का मुख रहता है। वत्स के मुख की दिशा में गृह का मुख निर्मित करना उत्तम नहीं होता। सिह, वृष, वृश्चिक और कुम्भ राशि के सूर्य में दरवाजा चारों दिशाओं में उत्तम होता है। अर्थात् इन राशियों में सूर्य हो तो गृहस्वामी अपनी इच्छा के अनुसार दिशा में द्वार निर्माण करा सकते हैं। वर्तमान में भूमि के अभाव के कारण इसमें निर्णीत समयानुसार भवन निर्माण करने पर अपने गृह दोषों से मुक्ति प्राप्त कर सकते है।

मूलद्वारं नान्यैर्द्वारैरभिसन्दधीत रूपर्द्ध-र्या ।

घटफलपत्रप्रमथादिभिश्च तन्मङ्गलैश्चिनुयात् ॥ (बृ.सं. 53.80)

सुन्दरता को व्यक्त करने वाली जितनी सामग्रियों को एकत्र कर मूल द्वार की रचना की गई हो, उतनी तरह से अन्य द्वारों की रचना नहीं करनी चाहिए। साथ ही कलश, श्रीफल, पत्र, पुष्प आदि से उस मूल द्वार की शोभा बढ़ानी चाहिए। द्वारमण्डल के बीच में स्थित उत्तम गजों से स्नान कराते हुए पद्मों को हाथ में लिए हुए पद्मों पर विराजित अलंकारों से सुसज्जित महालक्ष्मी के चित्र को चित्रित करवाना चाहिए। जैसा कि राजा भोजराज ने कहा है-

द्वारमम्डलमध्यस्था स्नाप्यमाना गजोत्तमैः।

पद्मासना पद्महस्ता श्रीश्च कार्या स्वलङ्कृता।।

6.1. **आँगन-** इसे ब्रह्मस्थल भी कहते हैं और इसका स्थान सदैव गृह के मध्य में होता है। इस स्थान पर किसी प्रकार का निर्माण या कूप आदि से रहित गृह निवास करनेवालों की सुख-समृद्धि हेतु सदा स्वच्छ एवं सुन्दर बनाना चाहिए।

युगाश्रेवायते क्षेत्रे चतुःषष्टिविभाजिते।

मध्यरेखास्थितास्तथो वंशा पूर्वापरायताः ॥

याम्योत्तरा यास्तास्तिश्च उपत्रंशाप्रभिन्नगा।

कर्णात्कर्णगतं सूत्रं शिरा सञ्ज्ञमिह न्यसेत् ॥ (वास्तुमण्डन 1.138-139)

सर्वप्रथम चौसठ पद वास्तु के क्षेत्र की रचना कर, इसके चौकोर क्षेत्र में नौ पूर्वापरा और नव दक्षिणोत्तरा रेखाएँ खींचकर तथा इसके कोनों में कर्णाकार दो-दो रेखाएँ खींच परर चौसठ पद क्षेत्र बनता है। चारों कोनों के मध्य में रेखाएँ बनाने पर देवताओं के स्थान प्राप्त होते हैं, इन्हें वंश कहते हैं। जैसा कि वराहमिहिर ने भी कहा है-

अष्टाष्टकपदमथवा कृत्वा रेखाश्च कोणगास्तिर्यक।

ब्रह्मा चतुष्पदोऽस्मिन्नर्थपदा ब्रह्मकोणस्था।।(बृहत्संहिता 53.55)

भोज ने भी मर्मवेध के सन्दर्भ में कहा है कि अन्तः के तेरह. बाहर के बत्तीस जो देवता हैं, उनके स्थान, जो मर्म, जो शिराएँ और जो वंश हैं. उनमें से मुख में, हृदय, नाभि, शिर तथा दोनों स्तनों में जो वास्तुपुरुष के मर्म हैं, उनको षण्महन्ति कहा जाता है-

अन्तस्त्रोदश सुरा द्वात्रिंशद् बाह्यतश्च ये।

तेषां स्थानानि मर्माणि सिरा वंशाश्च तेषु तु ॥

मुखे, हृदि च नाभौ च मूर्ध्नि च स्तनयोस्तथा ।

मर्माणि वास्तुपुंसोऽस्य षण्महान्ति प्रचक्षते॥ (समराङ्गणमुत्रधार 13, 6-7)

तत्पार्श्वयोस्तथा रेखे भाग भागन्तरे इह।

तन्त्राष्टसूत्रै पद्मानिषद्रवज्राणिद्वादश ॥

चतुष्कोणेषु शूलानि विकर्णे तुद्वतुलाङ्गलम्।

मर्माणि वंशसम्पात महामर्मम्बुजादिकम्॥ (वास्तुमण्डन 1.140-141)

उपर्युक्त रेखाओं पश्चात् पार्श्व के और रेखा से विभाजित आठ-आठ भाग देवों के स्थान होते हैं। इसी प्रकार पद में बारह स्थान मर्म के एवं चारों कोणों, विकर्णो को मिलाकर चौंसठ में अष्टमांश को मर्म परिमाण कहा गया।

पदमध्ये चोपमर्मतानिभिपादितस्त्यजेद्।

मर्माणि भित्तिभिः स्तम्भो कीलोच्छिष्टोपघातकैः।।(वास्तुमण्डन 1.142)

इस प्रकार जो मर्म निर्देशित किए गए हैं, इनको भीति से विस्तृत मध्य के द्वारा, स्तम्भ, कील, शल्यादि से पीडित नहीं करना चाहिए।

पीडपेहादिद्वास्तु भवनादिषु हानिकृत्।

पदयोषोडशांशेन द्वादशांशेन वायुनः॥

मर्मधानं स्मृतं कैश्चिदेकद्विव्यङ्गलोभितम्॥ (वास्तुमण्डन 1.144)

वास्तुपुरुष का कोई मर्माङ्ग पीडित हो तो भवनादि की हानि होती है। रोग से वायु पर्यन्त सोलह व बारह पद को हानि नहीं पहुँचाना चाहिए। मर्म का मान किसी ने एक अङ्गुल, किसी ने दो एवं किसी ने तीन अङ्गुल मान का निर्देश दिया है।

वराहमिहिर एक पद में अष्टमांश तुल्य मर्म का परिमाण बताया है कि यदि रोग से वायु तक, पित्तर से शिखी तक, वितथ से शोष तक, मुख्य से भृश तक, जयन्त से भृङ्ग तक और अदिति से सुग्रीव तक सूत्र बाँधे, तो इन सूत्रों के परस्पर नव सम्पात तक वास्तुपुरुष के अत्तिमर्म स्थान होते हैं-

रोगाद्वायुपितृतो हुताशनं शोषसूत्रमपि वितथात्।

मुख्याद्भंशजयन्ताच्च भृङ्गमदितेश्च सुग्रीवम्॥

तत्सम्पाता नव ये तान्यतिमर्माणि सम्प्रदिष्टानि।

यश्च पदस्याष्टांशस्तत् प्रोक्तं मर्मपरिमाणम् (बृ.सं.53,63-64)

मर्म एवं महामर्म बोधक मण्डल

पूर्व

शिखि	पर्जन्य	जयन्त	इन्द्र	सूर्य	सत्य	भृश	अन्तरिक्ष	अनिल
दिति								पूषा
अदिति				अर्यमा				वितथ
भुजग				ब्र				गृहक्षत
सोम		पृथिवीधर	ब्र	ह	मा	विस्वान्		यम
भल्लाट				मा				गन्धर्व
मुख्य				मित्र				भृंगराज
सर्प								मृग
रोग	पापयक्ष्मा	शोष	असुर	वरुण	कुसुमदन्त	सुग्रीव	दौवारिक	पिता

पश्चिम

द्वार-भीति से मर्म वेध फल- द्वारों से या दीवारों से मर्मों के पीडित होने पर गृहस्वामी दुर्गति अथवा कुलहानि होती है। यथा-

द्वारैर्वा भित्तिभिर्वापि मर्मणां परिपीडनात्।

दौर्गत्यं गृहिणः प्राहुः कुलहानिमथापि वा।। सं .सू.13.12

दीर्घविस्तारसङ्ख्यैक्यं चन्द्रैश्च गुणितं तथा।

नवभिस्तु हरेद्भागं शेषमाजिरमुच्यते ॥

दाता विचक्षणो भीरुः कलहो नृपदानवौ।

क्लीबश्चौरो धनी चेति नामतुल्यं फलं स्मृतम् ॥(वा.र. 88-89)

आँगन की लम्बाई-चौड़ाई को हाथों में नापकर उस अभीष्ट नाप को जोड़कर 1 से गुणाकर 9 का भाग देने पर शेष 1 दाता, 20 विचक्षण, 3 भीरु, 4 कलह, 5 नृप, 6 दानव, 7 नपुंसक, 8 चोर और 6 धनी ये आँगन के नाम होते हैं। इनका फल भी नामानुसार होता है।

दीर्घविस्तारहस्तैक्यं वसुभिर्गुणितं तथा।

नवभिर्भाजिते शेषं वदेद् गेहाङ्गणं सुधीः॥

तस्कर-भोगि-विचक्षण-दाता नृपतिर्नपुंसको धनदः।

दारिद्रो भयदाता नामसमानाः फलप्रदास्ते स्युः ॥(90-91)

आँगन की लम्बाई-चौड़ाई के योग को 8 से गुणा करने के उपरान्त 9 से भाग देने पर यदि क्रम से 1 तस्कर, 2 भोगी, 3 विचक्षण (पण्डित), 4 दाता, 5 नृपति, 6 नपुंसक, 7 धनाद, दरिद्र और 1 भयदाता ये नौ प्रकार के आँगन होते हैं, इनका फल भी नामानुसार होता है।

मध्ये निम्नं त्वङ्गणाग्रं तथोच्चैः शश्वच्चैवं पुत्रनाशाय गेहम् ॥ 92 ॥(वास्तुराजवल्लभ 6.4)

मध्य में नीचा एवं चारों ओर ऊँचा आँगन पुत्रनाशक होता है।

7.3 पूजाकक्ष- पूजाकक्ष- ज्ञान के अधिष्ठाता शिव ईशान कोण(उत्तर-पूर्व) के स्वामी हैं। अतः पूजाकक्ष इस कोण में प्रशस्त होता है, इसके अतिरिक्त दिशा में पूजा कक्ष का निर्माण पूर्व या उत्तर में ही निर्माण करना चाहिए। भगवान् का प्रतिमा पूर्व, पश्चिम व उत्तर की की ओर रखें और पूजा करते समय पूजक का मुँह पूर्व, पश्चिम एवं उत्तर की ओर रहना चाहिए।

7.4 स्नानगृह- स्नानगृह के लिए सबसे श्रेष्ठ स्थान दिशा पूर्व दिशा है लेकिन विकल्प के रूप में निर्माण करना हो तो गृह के पूर्वमुखी होने पर आग्नेय कोण से पहले पूर्व में अथवा पश्चिम-उत्तर(वायव्यकोण में स्नानगृह का निर्माण करना चाहिए लेकिन इसका ढ़लान ईशान कोण एवं पूर्व की ओर ही रखें।

यदि भवन पश्चिमोन्मुखी हो तो भूखण्ड की पूर्व दिशा निर्माण करना चाहिए, लेकिन इसका ढ़लान उत्तर एवं ईशान कोण एवं पूर्व की ओर ही रखें।

यदि भवन दक्षिणमुखी हो तो वायव्य कोण में निर्माण कर सकते हैं लेकिन इसका ढ़लान ईशान कोण एवं पूर्व की ओर ही रखें।

यदि भूखण्ड उत्तरमुखी वायव्यकोण में निर्माण कर सकते हैं यदि भवन पश्चिमोन्मुखी हो तो भूखण्ड की पूर्व दिशा निर्माण करना चाहिए, लेकिन इसका ढ़लान ईशान कोण एवं पूर्व की ओर ही रखें। स्नानगृह में नल एवं शावर पूर्व, ईशान कोण (उत्तर-पूर्व) में वाशबेशिन एवं दर्पण उत्तर या पूर्व की दीवार में, गीजर और वाशिंग मशीन आदि आग्नेय कोण (दक्षिण-पूर्व) या दक्षिण दिशा की ओर स्थापित करना चाहिए।

7.5 धनकक्ष- धनार्जन के रक्षक उत्तर के देवता कुबेर हैं। अतः नकद, कैशबॉक्स आदि धन उत्तर दिशा में ही रखने चाहिए, इसमें कैशबॉक्स दक्षिण दिशा में इस प्रकार निर्माण करना चाहिए कि वह उत्तर की ओर खुले और खिड़कियों से रहित हो। द्वार का विन्यास पूर्व या उत्तर दिशा में श्रेष्ठ है।

7.6 भण्डारकक्ष- ईशान कोण एवं पूर्व दिशा के मध्य में भण्डारकक्ष का निर्माण करना शुभ है। (**सोमे च मुख्यके वापि रत्नेमादिकालयम्। मानसार**

7.7 धान्य कक्ष-वायव्य कोण में धनसंचय या धान्यकक्ष का निर्माण करना चाहिए।

7.8 वराण्डा- आँगन के बाहर वराण्डा गृह की रक्षा करता है। अतः गृह से समाहित होकर अनेक स्तम्भों से युत वराण्डा बनाना चाहिए।

केचिद् वदन्ति दैवज्ञा गर्भमात्रं गृहं शुभम्।

गृहं हि भित्तिसहितं श्रेष्ठं दैवज्ञभूषणः।।(वास्तुमाणिक्यरत्नाकर 108)

जिस गृह के चारों दिशाओं में आलिन्द हों, उसको सर्वतोभद्र वास्तु कहा जाता है। इस गृह राजा-विद्वानों के लिए शुभ होता है। यथा- विश्वकर्मा ने अपने पुस्तक विश्वकर्मप्रकाश में वर्णन किया है-

अप्रतिषिद्धालिन्दं समन्ततो वास्तु सर्वतोभद्रम्।

नृपविबुधसमूहानां कार्यं द्वारैश्चतुर्भिरपि।।(2.171)

आँगन की लम्बाई और चौड़ाई को जोड़कर, उसमें 9 का भाग देने पर जो अंक शेष आए, उस शेष अंक के अनुसार शुभाशुभ का विचार करना चाहिए-

व्यामविस्तारयोरैक्ये नवभिर्भागमाहरेत्।

अजिरस्य तु शेषेण फलं वाच्य शुभाशुभम्।।

दानी विज्ञो महाभीरुः क्रोधी भूषतिदानवौ।

क्लीबो दस्युश्च धनवान् फलं नामसमं स्मृतम्।।(167-168)

आँगन का शुभाशुभ ज्ञान

विधि शब्द	दानी	विज्ञ	महाभीरु	क्रोधी	नृप	दानव	नपुंसक	चोर	धनवान्

शेष	1	2	3	4	5	6	7	8	9

7.9 **दूधादि द्रव**- पूर्व और अग्निकोण के मध्य में दूध व दही मथने का कक्ष तथा आग्नेयकोण एवं दक्षिण दिशा में घृत के लिए कक्ष की व्यवस्था करनी चाहिए। यथा- **मथनस्य गृहं वह्न्यागारं गेहं घृतस्य तु।।**(वास्तुमाणिक्यरत्नाकर 147)

7.10**शौचालय**- दक्षिण और वायव्य में शौचालय का निर्माण कर सकते हैं। भवन के ईशान, आग्नेय, पूर्व और मध्य में शौचालय का निर्माण नहीं करना चाहिए। सीट की व्यवस्था इस प्रकार हो कि उपयोग करते समय मुख दिन में उत्तर तथा रात्रि मे दक्षिण दिशा की ओर हो तथा शौचालय में नल उत्तर, पूर्व या ईशान कोण में तथा इसके फर्श का ढलान ईशान, पूर्व और उत्तर में करना चाहिए। जैसा कि पद्मपुराण के सृष्टिखण्ड में उल्लेख है-

प्राच्यां नरो लभेदायुर्याम्यां प्रेतत्वमश्नुते।

वारुणे च भवेद्रोगी आयुर्वितं तथोत्तरे।।

7.11**सेप्टिक टैंक**- सैप्टिक टैंक को पश्चिम दिशा एवं उत्तर दिशा में बनवाना चाहिए, इसकी लम्बाई पूर्व से पश्चिम की ओर रखनी चाहिए।

7.12**अध्ययनकक्ष**- अध्ययन कक्ष के लिए पूर्व दिशा, नैर्ऋत्य से अग्रिम पश्चिम, (वायव्य) दिशा में अध्ययन कक्ष शुभ हैं, इसके ईशान कोण में इष्टदेव या विद्या की देवी सरस्वती की प्रतिमा रखें। अध्ययन के समय पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख होकर बैठा जाए।

7.13**दाम्पत्य कक्ष**- इसके लिए वायव्य और उत्तर दिशा श्रेष्ठ हैं।

7.14 **पाकशाला**- रसोईघर सदैव आग्नेय कोण (दक्षिण-पूर्व) या पूर्व दिशा में ही निर्माण करना चाहिए है लेकिन आग्नेय कोण में सम्भव न हो तो वायव्य कोण (उत्तर-पश्चिम) में निर्माण कर सकते हैं परन्तु ईशान कोण, वायव्य कोण एवं नैर्ऋत्य कोण में पाकशाला का निर्माण करने से क्रमशः पुत्रक्लेश, अग्निभय, दुर्घटना, धनव्यय तथा परिवार में कलह के स्रोत उत्पन्न हो जाते हैं।

गैस चूल्हा रखने के लिए दक्षिण और पश्चिम दीवारों के सहारे व्यवस्था इस प्रकार करें कि भोजन बनाते समय मुख सदैव पूर्व की ओर रहे। जल व्यवस्था ईशान कोण में, सिंक के पानी निकलने के

लिए व्यवस्था ईशान (उत्तर-पूर्व) की ओर, गैस सिलेण्डर रखने के लिए आग्नेय कोण तथा पश्चिम या उत्तर दिशा में रेफ्रिजरेटर और वर्तन रखने की व्यवस्था दक्षिण, नैर्ऋत्य कोण या फिर पश्चिमी दिशा में और अलमारियों का निर्माण दक्षिण एवं पश्चिम दिशा में उत्तम है। यदि स्तान की कमी हो तो यथारुचि वस्तु रखने का स्थान बनाना चाहिए लेकिन गृह के दक्षिण भाग में घरट्टाम्बूल, ओखली-मूसल, चुल्लिका, पितृपद् प्रक्षालन आदि को रखना चाहिए। भोजन बनाते समय गृहिणी का मुख पूर्व की ओर होना चाहिए। **यथा-**

अल्पे शक्तिभुवो यथारुचि परे गेहस्य दक्षे

घरट्टाम्बूलूखलचुल्लिकापितृपदप्रक्षालनान्यूचिरे॥ (मुहूर्त्तमातण्ड 6.18)

7.15 **भोजनकक्ष-** पाचन क्रिया के सहायक स्वामी वरुण हैं अतः पश्चिम दिशा में भोजनकक्ष प्रशस्त होता है। भोजन कक्ष में आयताकार व वर्गाकार डायनिंग एवं बैठने का फर्नीचर इस प्रकार रखना चाहिए कि भोजन करते समय मुख पूर्व या उत्तर दिशा में हो।

7.16 **शयनकक्ष-**गृह के सदस्यों के अनुसार शयनकक्ष(Bedroom) की व्यवस्था करनी चाहिए। जैसे गृहस्वामी का शयनकक्ष दक्षिण में, नवदम्पत्ति का वायव्य में, कुमारी कन्याओं का वायव्यकोण एवं उत्तर- ईशान के मध्य में तथा सन्तान के लिए नैर्ऋत्य एवं पश्चिम दिशा में, वृद्धों के लिए उत्तर में, छोटे अतिथियों और बालकों के लिए पूर्व दिशा में श्रेष्ठ है। अर्थात् दक्षिण-पश्चिम अथवा नैर्ऋत्य कोण में वास्तुशास्त्र के अनुसार सही है। दक्षिण-पश्चिम एवं उत्तर-पूर्व की ओर रिक्तस्थान छोड़कर शय्या लगानी लगानी चाहिए और सिर सदैव दक्षिण एवं पूर्व की ओर होना चाहिए। शयनकक्ष के नैर्ऋत्य कोण या वायव्य कोण में वस्त्रादि के लिए अलमारी और अन्य धनादि के लिए दक्षिण व पश्चिम में व्यवस्था करना चाहिए।

बुद्धिविकास हेतु पूर्व की ओर सिर, दीर्घायु के लिए दक्षिण की ओर एवं चिन्तनवृद्धि के लिए पश्चिम की ओर सिर करके सोना चाहिए।

धान्यगोगुरुहुताशसुराणां न स्वपेदुपरि नाप्यनुवंशम्।

नोत्तरापरशिरा न च नग्नो नैव चार्द्रचरणः श्रियमिच्छन् ॥122॥

श्री की कामना करनेवाले मनुष्यों को अन्न, गौ, गुरु, अग्नि एवं देवताओं के ऊपर शयन नहीं करना चाहिए। उत्तर या पश्चिम की ओर शिर करके भी शयन नहीं करना चाहिए और जल से भीगे हुए पाँवों से विस्तर पर शयन नहीं करना चाहिए।

7.17 **स्वागतकक्ष**- (ड्रांइग रूम) उत्तर, ईशान कोण पूर्व की ओर अर्थात् पूर्व दिशा में ,उत्तर से वायव्य कोण की ओर श्रेष्ठ होता है, इसमें मनोरंजन कक्ष एवं अतिथिकक्ष शुभ होता है, इस कक्ष की इन दिशाओं में द्वार, खिड़की–रोशनदान तथा घड़ी, दक्षिण- पश्चिम की दीवारों पर आलमारी तथा अन्य सौन्दर्यवर्धक फर्नीचर लगाना चाहिए। अतिथिकक्ष में बैठने की व्यवस्था गृहस्वामी के लिए पूर्व-उत्तर में एवं अतिथियों के लिए दक्षिण- पश्चिम में सोफादि की व्यवस्था पश्चिम और दक्षिण दिशा में करनी चाहिए। शयन लिए व्यवस्था ऐसी होने चाहिए कि सोते समय अतिथि का शिर दक्षिण या पूर्व की ओर हो। मनोरंजन के लिए टी.वी. आदि आग्नेयकोण, पश्चिम एवं वायव्यकोण में व्यवस्था करनी चाहिए। अतिथिकक्ष का प्रवेश द्वार पूर्व या उत्तर में उत्तम रहता है।

7.18 **पशुशाला**- इसका निर्माण वायव्य कोण में इस प्रकार करना चाहिए कि पशुओं का मुख उत्तर एवं दक्षिण दिशा की ओर हो।

7.19 शस्त्रागार- नैर्ऋत्यकोण (दक्षिण-पश्चिम) में शस्त्रागार शुभ होता है।

7.20 **आन्तरिक सज्जा**- गृह या कक्षों में दीपक का स्थान अर्थात् लाइट की वस्तुओं का स्थान सदैव दक्षिण भाग में होना चाहिए। जिसके वाम भाग में अर्गला लगी हों ऐसे मध्य अथवा वाम भाग में दीपक का स्थान शुभ नहीं है। परन्तु देवता स्थान वाम भाग में रखना अभीष्ट सिद्धि हेतु श्रेष्ठ होता है।

छत्र एवं मालाओं से विभूषित धेनु को बछडे के सहित भीति पर चित्रित करवाना चाहिए। बाहर या अन्दर विचित्र पल्लवों एवं लताओं का आलेखन करवाना करवाएँ जो आहार योग्य फल एवं पुष्पों से तिरक्षे झुके वृक्ष हों। जैसा कि समराङ्गमसूत्रधार में राजा भोज ने कहा ह

वृषः सवत्सा धेनुर्वा सच्छत्रस्त्रग्विभूषणा।

फलभक्तैर्बहुविधैराहारथार्थं निवेदितैः।

नानापुष्पफलैर्नम्रैः शालैस्तिर्यगवस्थितैः।।

चित्रा पत्रलता लेख्या बाह्याभ्यन्तरभित्तिषु। (29-30)

दीपालयो दक्षिणदिग्विभागे सदा विधेयोऽर्गलया समेतः।

वामे च मध्ये न शुभाय गेहे सुरालयो वामदिशीष्टसिद्धयै ॥29॥

गृहे न रामायणभारताहवं चित्रं कृपाणाहवमिन्द्रजालिकम्।

शिलोच्चयारण्यमयं सदासुरं भीष्मं कृताक्रन्दनरं त्वनम्बरम् ॥

वाराहशार्दूलशिवा प्रदाको गृद्धाभिधोलूककपोतवायसाः।

सश्येनगोधादिवकादिपत्रिणो विचित्रिता नो शरणे शुभावहाः ॥(वा.र.77-78)

भवन में रामायण एवं महाभारत के युद्धों का चित्र, खड्गयुद्ध का चित्र, इन्द्रजालिक चित्र और पत्थर और काष्ठ से निर्मित राक्षसों की भयङ्कर मूर्ति, रोते हुए मनुष्य की मूर्ति, बराह , शार्दूल, शिवा ,पृदाकु (नाग), गिद्ध, उल्लू, कपोत, वायस (कोआ), बाज, गोह, बकुला इत्यादि पक्षियों का चित्र भी घर में लगाना शुभ नहीं है।

गोशाला- गायों का कक्ष उत्तरदिशा में भल्लाट पद और ईशानकोण शुभ है जैसा कि भोजराज ने समराङ्गणसूत्रधार में तथा मानसार में वर्णन है- **गवां स्थानं तथा क्षीरगृह भल्लाटनामनि। ईशे तु धेनुशालाश्च।**

7.21 **गैराज**- दक्षिण -पूर्व, वायव्य कोण(उत्तर-पश्चिम- भृंशपद) दिशा की ओर गैराज की व्यवस्था करनी चाहिए, इसका ढलान उत्तर या पूर्व दिशा की ओर श्रेष्ठ होता है परन्तु ध्यान रहे बेसमेंट में गैराज बनानी हो तो उत्तर-पूर्व दिशा में ही निर्माण करें। प्रवेश द्वार उत्तर एवं पूर्व दिशा में शुभ रहता है।

भृशे यानालयं कुर्यात्।

7.22 **सोपान विचार**- विषम संख्या में सीढ़ियों का निर्माण करना चाहिए। यह दो प्रकार की होती हैं जैसे-1.गुह्य सोपान 2. अगुह्य सोपान।

भूमि से सोपान ऊँपर की ओर होते है, उनका दरवाजा पूर्व अथवा दक्षिण की ओर हो तो शुभदायक होता है। सोपानों के नीचे और ऊपर दोनों ओर दरवाजों का निर्माण करना चाहिए। नीचे के दरवाजे से ऊपर का दरवाजा 12 वाँ हिस्सा कम करवाना चाहिए। प्रासाद, मठ, राजाओं के महल आदि में पत्थल की दीवाल शुभ होती है। सामान्य गृहों में पत्थर की दिवाल शुभ नहीं है। फिर भी पत्थर दिवाल में लगाना हो तो बाहर होने पर शुभ होते हैं और आँगन के फर्स में तथा कुम्भी में भी प्रशस्त होते हैं। अर्थात् सीढ़ियाँ दक्षिण, नैर्ऋत्यकोण, पश्चिम वायव्य कोण में उत्तम होती हैं, इसका द्वार पूर्व या दक्षिण की ओर शुभ होता है और जिस दिशा से सीढ़ियों का द्वार प्रारम्भ किया है उसी दीवाल पर ऊपरवाला द्वार आना चाहिए। लेकिन सीढ़ियों का निर्माण घुमावदार हो तो उनका घुमाव पूर्व से दक्षिण दक्षिण से पश्चिम, पश्चिम से उत्तर, उत्तर से पूर्व की ओर प्रदिक्षणा क्रम से विषम संख्या में शुभ होती है।

भूम्यारोहणमूर्ध्वतस्तदुपरि प्राग्दक्षिणं शस्यते।
द्वारं तूर्ध्वभवं च भूमिरपरा ह्रस्वार्कभागैः क्रमात्।
प्रासादे च मठे नरेन्द्रभवने शैलः शुभो नो गृहे
तस्मिन् भित्तिसु बाह्यकासु शुभदः प्राग्भूमिकुम्भ्यां तथा।।(वा.रा.5.36)

सीढ़ियों के नीचे शौचालय आदि का निर्माण नहीं करें। आकार के अनुसार इनकी तीन योनियाँ होती हैं- यथा- आयताकार, वर्गाकार और वृत्तीय। इसी प्रकार चार प्रकार के सोपान हो सकते हैं त्रिखण्ड, शंखमण्डल, अर्धगोमूत्रक और वल्लीमण्डल जैसा कि शिल्परत्न में कहा गया है-

अयुग्मसोपानकरणं गुह्यागुह्यमिति द्विधा।
वेदाश्रं दीर्घवेदाश्रं वृत्तं चेति त्रियोनिकम्।।
चतुर्विधं प्रकारैः स्यात् त्रिखण्डं शङ्खमण्डलम्।
अर्धगोमूत्रकं चाथ वल्लीमण्डमित्यपि। (शि.र.पू.22.105-106)

जो सोपान तीन खण्ड के होते हैं उन्हें त्रिखण्ड सोपान कहते हैं ये कृमशः मूलस्थान से छोटे होते जाते हैं। यदि दो खण्ड के हों तो शंखमण्डल और वृक्ष पर लता की तरह ऊपर की ओर घूमते हुए तल पर चढ़े तो वल्लीमण्डल सोपान कहते हैं, इसकी ऊचाई को गहराई से चौथाई, आधी या तीन चौथाई रखना चाहिए।

त्रिखण्डाकाररचितं यत्सोपानं त्रिखण्डकम्।

मूलादग्रं तु संक्षिप्तं क्रमाद्यच्छङ्खमण्डलम्।

तदद्विखण्डं च सोपानमर्धगोमूत्रसंज्ञकम्।।

वृक्षारोहिलताकारं वल्लीमण्डलसंज्ञकम्।

शयितं व्यासपादार्धत्रिपादोच्चानि वै पृथक्।।(शि.र.पू.22.107-109)

प्रासाद या मण्डप में प्रत्येक तल पर पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ प्रदक्षिणक्रम से चढ़ाना प्रशस्त होती हैं और वे भी अयुग्म (विषम) सोपान बनाना शुभ होता है।

पश्चिम दीवार पर पूर्व से पश्चिम की ओर तथा दक्षिण दीवार पर उत्तर से दक्षिण की ओर चढ़ते हुए निर्माण करवाना चाहिए।

7.23 **बेसमेंट-** भूखण्ड के मध्य में एवं नैर्ऋत्य कोण (दक्षिण-पश्चिम) वायव्य (उत्तर-पश्चिम) अथवा आग्नेय कोण (उत्तर-पूर्व) में नहीं बनाना चाहिए।

7.24 **नौकर कक्ष-** आग्नेय कोण (दक्षिण-पूर्व) अथवा ईशान कोण (उत्तर-पूर्व) हैं। पर इसका निर्माण करते समय यह ध्यान में रखें कि उत्तर व पूर्व दिशा की मुख्य दीवारों छोड़कर बनाना चाहिए।

8 **छत-** विना छत के गृह पूर्ण एवं शुभ नहीं होता है। गृह का छाद्य आगे की ओर निकला हुआ होना चाहिए। गृह की ऊँचाई से आधा, चतुर्थांश या पञ्चमांश निकला हुआ छाद्य शुभ होता है। छाद्य की आकृति काक पक्ष, कुमुदपुष्प, सूप या मोरपक्ष के समान, प्रालम्ब अथवा करालक आदि छः प्रकार की छतों का विद्वानों ने वर्णन किया है-

उच्छ्रायार्धविनिर्गतं शरयुगांशेनाधिकं शस्यते

छाद्यं पट्टसमानकं सुखकरं नाशाय निम्नोन्नतम् ।

तत्काकस्य च पक्षवच्च कुमुदाभं सौर्यकालापकम्

प्रालम्बं च करालकं हि विबुधैः प्रोक्तं च तत्षड्विधम् ।। (राजवल्लभमण्डन)

इकाई का सार-

1. **ईशान कोण** – पूजाघर, कूप, द्वार,बरामदा, लान एवं तलघर।

2. **पूर्व दिशा**- कूप, . स्नानागार, सैप्टिक टैंक, द्वार, पूजाघर, कक्ष, अतिथिकक्ष, सामान्य स्टोर, बेसमेन्ट, पाकशाला, वाहन स्थान, बगीचा इत्यादि।

3.**आग्नेय कोण**- रसोईघर, सीढ़ियाँ, इन्वर्टर बिजली मीटर आदि।।

4. **दक्षिण दिशा**-शयनकक्ष, सीड़ियाँ, ऊँपर पानी की टंकी, सामान्य स्टोर और शौचालय।

5. **नैर्ऋत्य कोण**- स्टोर कक्ष, कचरा पात्र, सीड़ियाँ, पानी की टंकी, शस्त्रागार, भंडार कक्ष, परिवार के मुखिया का शयन कक्ष, ऑफिस इत्यादि।

6. **पश्चिम दिशा**- अध्ययनकक्ष, भोजनकक्ष, शयनकक्ष, भंडार कक्ष, सीड़ियाँ, द्वार, पानी की टंकी और सैप्टिक टैंक इत्यादि।

7. **वायव्य दिशा**- 1. अतिथिकक्ष, धनसंग्रह, खाद्यान्न का भण्डार, पशुशाला, शौचालय, लिविंग रूम और सीढ़ियाँ आदि।

8. **उत्तर दिशा**- लिविंग रूम, अविविवाहित बच्चों का कमरा, , कोषागार, द्वार, बगीचा, औषधि कक्ष, अध्ययन कक्षादि।

उत्तर
धन संग्रह
अतिथि कक्ष
शयन कक्ष
धनसंग्रह
कार्यालय
शयनकक्ष
औषधि कक्ष
मन्दिर
बाल कक्ष
प्रशाधनकक्ष
कूपस्थान
भण्डारकक्ष/
आवास कक्ष
पश्चिम
भोजन कक्ष
शयन कक्ष
बैठक कक्ष
ब्रह्म स्थान/
मर्मस्थान
उद्यान
आवास कक्ष
कार्यालय
अध्ययन कक्ष
अवकर कक्ष
शयनकक्ष
भण्डारकक्ष
अवकर कक्ष
प्रसाधन कक्ष
पाकशाला
शयन कक्ष
पाकशाला
शयन कक्ष
पाकशाला
/ कार्यालय
दक्षिण

दिशा एवं उसके अधिपति के अनुसार गृह प्रबन्ध एवं गृह सज्जा करनी चाहिए।

8.1**उद्यानव्यवस्था-**

पूर्वस्यां वकुलो वटश्च शुभदोऽवाच्यां तथोदुम्बर-

श्चिञ्चा चाम्बुपतौ तु पिप्पलतरुः सप्तच्छदोऽपि स्मृतः।

कौबेर्यां दिशि नागसञ्ज्ञिततरुः प्लक्षश्च संशोधनाः

प्राच्यादौ तु विशेषतः पनसपूगौ केरचूतौ क्रमात् ॥ (म. च. 1. 22)

गृह की पूर्व दिशा में बकुल एवं वटवृक्ष, दक्षिण दिशा में उदुम्बर या गूलर और चिञ्चा या इमली का का वृक्ष, गृह की पश्चिम दिशा में पीपल और सप्तच्छद के वृक्ष, उत्तर दिशा में नाग संज्ञक वृक्ष और प्लक्ष या पाकड़ और विशेष रूप से पूर्व दिशा में पनस (कटहल) एवं पुग, सुपारी, नालिकेल तथा आमवृक्ष शुभ होते हैं। इसी प्रकार बृहत्संहिता में वर्णन है यथा

याम्यादिष्वशुभफला जातास्तरवः प्रदक्षिणेनैते ।

उदगादिषु प्रशस्ताः प्लक्षवटोदुम्बराश्वत्था ॥ (बृ.सं. 53.83)

पाकर, वट, गूलर और पीपल- ये चार वृक्ष प्रदक्षिणक्रम से दक्षिण आदि दिशाओं में अशुभ और उत्तर आदि दिशाओं में शुभ होते हैं। जैसे- दक्षिण में पाकर, पश्चिम में वट, उत्तर में गूलर और पूर्व में पीपल का वृक्ष अशुभ तथा उत्तर में पाकर, पूर्व में वट, दक्षिण में गूलर और पश्चिम में पीपल का वृक्ष शुभ होता है।

उपर्युक्त वृक्षों को विपरीत दिशा में रोपने से घर में परेशानियाँ आती रहती हैं। यदि अश्वत्थ को पूर्व दिशा में लगाने से अग्निभय, प्लक्ष से आलस्य, वटवृक्ष से शस्त्र से भय एवं उदुम्बर से उदरादि अनेक व्याधियाँ उत्पन्न होती है। अतः ये वृक्ष यदि विपरीत दिशाओं में लगे हों तथा आवास की ऊँचाई से कम दूरी पर खड़े अर्थात् घर के ऊँपर उनकी छाया पड़ती हों तो चाहे सोने से निर्मित ही क्यों नहीं हो, उनको काट देना चाहिए। जैसा मनुष्याचन्द्रिका में कहा गया है-

अश्वत्थोऽग्निभयं करोति बहुधा प्लक्षः प्रमादप्रदो

न्यग्रोधः परशस्त्रपातमुदरव्याधिं तथोदुम्बरः।

सम्प्रोक्तप्रतिदिस्थितास्त्वपि च ते चान्ये सुवर्णात्मका-

श्छेद्या मन्दिरतस्तरुच्चयुगसीमाभ्यन्तरस्था यदि ।।1.23।।

अशुभ वृक्ष-

आसन्नाः कण्टकिनो रिपुभयदाः क्षीरिणोऽर्थनाशाय ।

फलिनः प्रजाक्षयकरा दारूण्यपि वर्जयेदेषाम् ॥84॥

छिन्द्याद्यदि न तरूंस्तान् तदन्तरे पूजितान् वपेदन्यान् ।

पुन्नागाशोकारिष्टबकुलपनसान् शमीशालौ ॥85॥

काँटेदार वृक्ष के गृह-समीप में रहने से गृहस्वामी को शत्रुभय होता है। दूध वाला वृक्ष गृह के समीप में रहने से धन का नाश होता है। फल वाले वृक्ष के गृह के समीप में रहने से सन्तति का नाश होता है। साथ ही इनके काष्ठों का गृह में प्रयोग करने से भी शुभ नहीं है। यदि उपर्युक्त काँटेदार आदि वृक्षों को काट कर उनकी जगह पुन्नाग, अशोक, अरिष्ट, वकुल, कटहल, शमी या शाल वृक्ष का रोपण कर दें तो उपर्युक्त दोष दूर हो जाते हैं।

समरांगणसूत्रधार में वर्णन है कि

बदरी कदली चैव दाडिमी बीजपूरिका

प्ररोहन्ति ग्रहे यत्र तद्गृहं न प्ररोहति।।(48.131)

अन्तः सार वृक्ष-

अन्तःसार के वृक्ष पनस या कटहलादि वृक्ष अन्तःसार हैं, इनके मध्य में कठोरता होती है; इमली एवं सागवान जैसे वृक्ष सर्वसार कोटि के हैं जिनमें सर्वत्र कठोरता होती है; ताड़, नारियल, क्रमुक और सुपाड़ी आदि के वृक्ष बहिः सार कोटि के हैं जिनमें बाहर की ओर कठोरता होती है जबकि शिग्रु व सेजन, सप्तच्छद, शतपर्णी, शुकतरु, शिरीष आदि पलाश जैसे वृक्ष निःसार कोटि के माने गए हैं जो कोमल होते हैं, इनमें से कोटिरूपानुसार ही वृक्षों का गृह वाटिका में लगाना चाहिए। तात्पर्य है कि अन्तःसार वृक्षों को अन्तः व सर्वसार वृक्षों को बाहर और बहिःसार तथा निःसार वृक्षों को बाहर लगाना चाहिए। जैसा कि मनुष्यालयचन्द्रिका में वर्णन है यथा-

अन्तःसारास्तु वृक्षाः पनसतरुमुखाः सर्वसाराश्च शाका-

श्विञ्चाद्यास्तालकेरक्रमुकयवफलाद्या बहिस्सारवृक्षाः ।
निःसाराः शिग्रुसप्तच्छदशुकतरवः किंशुकाद्याश्च कार्या-
स्तेष्वाद्या मध्यभागे बहिरपि च ततः सवसारास्ततोऽन्ये ।।(म. च.1.25)

प्रशस्तभूमिलक्षण – ब्रह्मवैवर्तपुराण 103

शस्तौषधिद्रुमलता मधुरा सुगन्धा स्निग्ध समा न सुषिरा च महीनराणाम् ।
अप्यध्वनि धत्ते श्रियं श्रमविनोदमुपागतानां किमुत शाश्वतमन्दिरेषु ॥86॥

प्रशस्त औषधी वाली, द्रुम (याज्ञिक वृक्ष पलाश आदि) वाली, लताओं से युत, मधुर मिट्टी वाली, सुगन्धि वाली, निर्मल, समान और छिद्ररहित भूमि मार्ग में गमन से उत्पन्न श्रम को हटाने की इच्छा से वहाँ पर थोड़ी देर के लिये बैठे मनुष्य को भी लक्ष्मी प्रदान करती है। फिर ऐसी भूमि जिनके घर के पास में ही सदा रहती हो, उनके सम्बन्ध में तो कहना ही क्या है? अर्थात् उनको तो अवश्य ही लक्ष्मी की प्राप्ति कराती है।।

8.2आन्तरिक सज्जा- आन्तरिक सज्जा वास्तुशास्त्र के अनुकूल ही होनी चाहिए।

8.3**विद्युत योजना एवं अन्य यन्त्र**- विद्यतु मीटर एवं अन्य उपकरणों की व्यवस्था आग्नेयकोण में करनी चाहिए।

8.4**नलस्थान निर्णय (कूप विचार)**- भवन के मध्य भाग में कुआँ हो तो धन नाश, ईशान कोण में पुष्टि, पूर्व में ऐश्वर्य वृद्धि, अग्निकोण में पुत्रनाश, दक्षिण में स्त्रीनाश, नैर्ऋत्य कोण में मृत्यु पश्चिम में सम्पत्ति, वायव्य कोण में शत्रु पीडा एवं उत्तर में सुख प्राप्त होता है। कूप या नल की व्यवस्था ईशान कोण में, पूर्व में, पश्चिम में और उत्तर दिशा में श्रेष्ठ है यथा-

कूपे वास्तोर्मध्यदेशेऽर्थनाशस्त्वैशान्यादौ पुष्टिरैश्वर्यवृद्धिः।
सूनोर्नाशः स्त्रीविनाशो मृतिश्च सम्पत्पीडा शत्रुतः स्याच्च सौख्यम्।।(मुहूर्त्तचिन्तामणि)

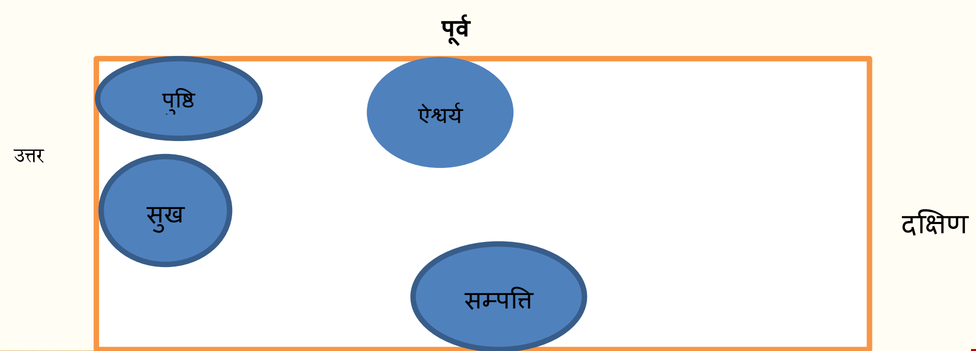

पश्चिम

8.5**नालीस्थान निर्णय**- उत्तर, ईशान, पूर्व और वायव्यकोण में जल प्रवाह की व्यवस्था करनी चाहिए। जैसा कि वास्तुमाणिक्य रत्नाकर में कहा गया है-

गृहाद्वारि निःसारणार्थं प्रकुर्य्यात् बिलं पूर्वकाष्ठादिके तत्फलञ्च।

शुभ चाशुभं दुःखदं पुत्रहानिः समं शोभनं वृद्धिदं पुत्रदं च।।(165 पृ.सं.470

8.6**खिड़कीस्थान निर्णय**- वायु के संचार एवं गृह की उन्नति के लिए पूर्व, उत्तर, पश्चिम की दीवारों पर खिड़कियों को सम संख्या में निर्माण करना चाहिए।

वातायनं लुम्बिकया विहीनं बुधैरुदीर्णस्त्रिपताक एव।

द्विलुम्बिकश्चोभयसंज्ञकश्च यः स्वस्तिकोऽसौ युगलुम्बियुक्तः॥

स्याद् बाणैः प्रियवक्र एव सुमुखः षड्भिर्युतश्चेति च

छाद्यैकेन युतः सुवक्र उदितो द्वाभ्यां प्रियङ्गो भवेत्।

एकेनोपरिपद्मनाभ उदितस्तद्दीपचित्रो युगै-

वैचित्र्यं शरपङ्क्तिभिस्तु विविधाकारैर्युतः पञ्च च ॥

सिंहो दैर्ध्यविवृद्धितो हि पृथुले हंसो गवाक्षो भवे-

तुल्योऽसौ मतिदोऽपि भद्रसहितो ज्ञेयस्तु बुद्धयर्णवः।

द्वारेणैव युगास्त्रकेण गरुडः पक्षद्वये जालकं प्रोक्ताः

पञ्चदशैव रूपमटलावेद्यादिकक्षासनैः ॥ (वास्तुराजवल्लभ 86-88)

जिस वातायन में लुम्बिका नहीं हो उसको पण्डित लोग त्रिपताक कहते हैं। जिसमें दो लुम्बिकायें हों उसको उभय, जिसमें 4 लुम्बिकाएँ हों उसको स्वस्तिक, जिसमें 5 लुम्बिकाएँ लगी हों उसको प्रियवक्र और जिसमें 6 लुम्बिकाएँ हों उसको सुमुख कहते हैं। जिसमें एक छाद्य हो उसको शुत्रक्र, जिसमें दो छाद्य हो उसको प्रियङ्ग, जिसमें 3 छाद्य हो उसे पद्मनाभ, जिसमें 4 छाद्य हो उसको दीपचित्र और 5 छाद्य हो उसको वैचित्र्य कहते हैं।

जिस वातायन लम्बाई अधिक हो उसको सिंह, जिसकी चौड़ाई अधिक हो उसको हंस और जिसकी लम्बाई-चौड़ाई दोनों बराबर हों उसे मतिद। जो गवाक्ष भद्रयुक्त हो उसको शुद्ध्यर्णव, जिसकी चारों

ओर द्वार हों उसको गरुड और जिस गवाक्ष के दो और द्वार हों उसको जालक कहते हैं। इस प्रकार रूप, मटला, वेदी एवं कक्षासन इत्यादि प्रकार से 15 प्रकार के गवाक्ष होते हैं।

8.7**रोशनदाननिर्णय**- वायु के संचार एवं गृह की उन्नति के लिए पूर्वी और उत्तरी दीवारों पर खिड़कियो के ऊपर कुछ स्थान छोड़कर सम संख्या में निर्माण करना चाहिए।

8.8**उपस्कर निर्णय-** उपस्कर के लिए नैर्ऋत्य कोण श्रेष्ठ है।

स्नानाग्निपाकशयनास्त्रभुजश्च धान्य भाण्डारदैवतगृहाणि च पूर्वतः स्युः।

तन्मध्यतस्तु मथनाज्यपुरीषविद्या भ्यासाख्यरोदनरतौषधसर्वधाम ॥ (मुहूर्तचिन्तामणि, वा.प्र. 21)

राजाओं के आवास- पूर्व दिशा से प्रारम्भ कर क्रमशः स्नान गृह, पाकशाला, शयन गृह, शस्त्रागार, जन गृह, धान्य गृह, भाण्डार गृह एवं पूजा गृह। इनके मध्य में घृतमथन गृह, घृतगृह, शौचालय, विद्याभ्यास कक्ष, रोदन कक्ष, रति गृह, औषधिकक्ष और सर्ववस्तु संग्रहकक्ष का निर्माण होता है।

ईशान कोण से पूर्व पर्यन्त- देवगृह, सर्ववस्तुसंग्रहकक्ष, स्नान गृह, मथन गृह।

आग्नेय कोण से दक्षिण पर्यन्त रसोई, घृत कक्ष, शयन कक्ष, शौचालय ।

नैर्ऋत्य कोण से पश्चिम पर्यन्त - शस्त्रागार, विद्याभ्यास गृह, भोजन गृह, रोदन गृह।

वायव्य कोण से उत्तर पर्यन्त- धान्य गृह, रतिगृह, भाण्डार, औषधालय।

इकाईः 8, गृहप्रवेश

भूमिपूजा, कूपखनन, गृह निर्माण, स्थम्भस्थापन, गृह प्रवेश इत्यादि के प्रारम्भ में सज्ञा पूर्वक वास्तु पूजन करने से सुख, शान्ति, आरोग्य एवं समृद्धि प्राप्त होती है और इसके न करने पर स्थान के दुष्प्रभावों का सामना अवश्य करना पड़ता है। ग्राम, राजभवन, नगर इत्यादि के निर्माण के समय 64 पद के वास्तु की, समस्त प्रकार के गृहों में 81 पद के वास्तु की, जीर्णोद्धार में 46 पदके वास्तु की, प्रासाद एवं मण्डप में 100 पद के वास्तु की और कुआँ, वापी एवं तडागों के निर्माण के समय 166 पद के वास्तु की पूजा करनी चाहिए- यथा-

ग्रामे भूपतिमन्दिरे च नगरे पूज्यश्चतुष्पष्टिकै-

रेकाशीतिपदैः समस्तभवने जीर्णे नवाब्ध्यंशकैः।

प्रासादे तु शतांशकैस्तु सकले पूज्यस्तथा मण्डपे

कूपे पण्नवचन्द्रभागसहिते वाप्यां तडागे वने ॥ (वा. रा.2.4)

वास्तुकार- पूर्वाचार्यों के अनुसार नवीन गृह में प्रवेश गुरु और शुक्र के बली होने पर उत्तरायण तथा शुक्ल पक्ष,

शुभ दिन में गृहप्रवेश के पूर्व वास्तु पूजा, भूतबलि आदि कर्म करने के उपरान्त ही गृहप्रवेश करना चाहिए। जैसा कि वृद्ध वशिष्ठ जी का मत है-

प्रवेशो नवसद्यनश्च सौम्यायने जीवसिते बलाढये।

सिते च पक्षे शुभवासरे च वास्त्वर्चनं भूतबलिं च कृत्वा।।

गृह के निर्माण के उपरान्त उसमें विधि-विधान से प्रवेश करने के निमित्त तीन प्रकार के गृहप्रवेशों का वर्णन प्राप्त होता है- नूतन गृह के लिए अपूर्वसंज्ञक, यात्रा पूर्ण होने पर गृह प्रवेश होता है, उसको 'सपूर्व प्रवेश' कहते हैं और अग्नि आदि से नष्ट होने के बाद उसमें जो प्रवेश द्वन्द्व संज्ञक गृहप्रवेश कहते हैं। जैसा कि वशिष्ठ जी ने कहा है-

अपूर्वसंज्ञं प्रथमप्रवेशं यात्रावसाने च स पूर्वसंज्ञम्।

द्वन्द्वाह्वयश्चाग्निभयादिजातस्त्वेवं प्रवेशस्त्रिविधः प्रविष्टः॥1॥

नूतन गृह में प्रवेश के समय वास्तुपूजा अवश्य की करनी चाहिए, जैसा कि वशिष्ठ जी का मत है-

तत्र तावत्प्रवेशलक्षणम् निर्माणे मन्दिराणां च प्रवेशे त्रिविधेऽपि वा ॥ 1॥

वास्तुपूजा तु कर्त्तव्या यस्मात्तां कथयाम्यथ।

8.1. नूतनगृहप्रवेश

एकाशीतिकोष्ठकम्

गृहमध्ये हस्तमात्रं समन्तात्तण्डुलोपरि ॥ 2॥

एकाशीतिपदं कार्यं तिलैस्तुल्यं सुशोभनम्।

वास्तुपूजन के लिए भवन के मध्यभाग में चावल पर पूर्व से पश्चिम की ओर एक-एक हाथ लम्बी दस रेखाएँ खींचकर, उत्तर से दक्षिण की ओर भी लम्बी-चौडी दस रेखाएँ खींचकर एकाशीतिकोष्ठक का निर्माण करें।

एकद्वित्रिपदाः पञ्चचत्वारिंशत्सुरोर्चिताः ॥ 3॥

द्वात्रिंशद्बाह्यतो वक्ष्यमाणाश्चान्तस्त्रयोदश।

तेषां स्थानानि नामानि वक्ष्यामीश्वरकोणतः॥ 4॥

उन एक्यासी कोष्ठकों में एक, दो एवं तीन पदों वाले 45 देवताओं की ययोक्त स्थानानुसार पूजा के लिए नामोल्लेख करना चाहिए। इनमें से 32 देवताओं को बाहरी प्रान्त के कोष्ठकों और 13 देवताओं को आन्तरिक कोष्ठकों में स्थापित करना चाहिए।

देवतास्थान-

तत्राग्निशम्भुकोणस्थस्त्वसौ चैव पदेश्वरः।

तस्माद्वितीयः पर्जन्यश्चासावेकपदेश्वरः ॥5॥

जयन्त्येन्द्रार्कसत्याख्या भृशाश्च द्विपदेश्वराः।

आकाशवायूपरतः क्रमादेव पदेश्वराः ॥ 6 ॥

एवं प्राच्यां नव ज्ञात्वा नवमे वान्यदिक्षु च।

आद्याश्चान्तावेकपादा द्विपादाः पञ्च मध्यमाः ॥ 7 ॥

अष्टौ पितृगणाधीशा यमान्ताः पश्चिमे सुराः।

आद्यन्तौ द्वौ चैकपदी द्विपदाः पञ्च मध्यगाः ॥ 8 ॥

रोगादिरित्यन्त्यसुराः सप्त सौम्यदिशि क्रमात् ।

तदधस्थश्चतुष्कोणेष्वीशानादिषु च क्रमात् ॥ 9 ॥

आपः सावित्रविजयरुद्राश्चैकपदेश्वराः।

मध्ये नवपदो ब्रह्मा तस्येशानादिकोणगाः ॥ 10 ॥

आपवत्सोऽथ सविता विबुधाधिपसंज्ञकाः।

राजयक्ष्मा च चत्वारः सुराश्चैकपदेश्वराः ॥ 11॥

ब्रह्मणः पूर्वतो दिक्षु त्रिपदाश्चामरा अमी।

अर्यमा च विवस्वांश्च मित्रः पृथ्वीधरः क्रमात् ॥ 12 ॥

स्वस्वस्थानेषु देवेषु स्थापितेष्वीदृशं भवेत्।

कोणेषु पञ्च पञ्चैव चतुष्वैकपदाः सुराः ॥ 13॥

प्रागादिदिक्षु द्विपदाः पञ्च पञ्च यथाक्रमात्।

ब्रह्मणः पूर्वतो दिक्षु द्विपदाः स्युः समीपगाः ॥ 14॥

हिरण्यरेताः पर्जन्यो जयन्तः पाकशासनः।

सूर्यसत्यौ भृशाकाशौ वायुः पूषा च वै तथा॥ 15 ॥

गृहक्षतः पितृपतिर्गन्धर्वो भृङ्गराजकः।

मृगः पितृगणाधीशः स्थाप्यो दौवारिकाह्वयः ॥ 16 ॥

सुग्रीवः पुष्पदन्तश्च जलाधीशो निशाचरः ।

शोषः पापश्च रोगो हि मुखो भल्लाट एव च ॥ 17॥

सोमसर्पौ दित्यदिती द्वात्रिंशदमराः स्मृताः।

आपश्चैवापवत्सश्च जयो रन्ध्रस्तथैव च ॥ 18 ॥

मध्ये नवपदो ब्रह्मा तस्थौ तस्य समीपगः।

प्रागाद्यन्तरिता देवाः परितो ब्रह्मणः स्मृताः॥ 19 ॥

अर्यमा सविता चैव विवस्वान्विबुधाधिपः।

मित्रोऽध राजयक्ष्मा च तथा पृथ्वीधरः क्रमात् ॥ 20 ॥

आपवत्सोऽष्टमः पञ्चचत्वारिंशत् सुरोत्तमाः।

ज्ञात्वैवं स्थाननामानि ब्रह्मणा सहिता न्यसेत् ॥ 21 ॥

ईशान कोण से आरम्भ करते हुए क्रमशः कोणों के बत्तीस बत्तीस देवता पूज्य हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं- अग्नि, पर्जन्य, जयन्त, इन्द्र, सूर्य, सत्य, भृश, आकाश, वायु, पूषा, अन्त या वितथ, गृहक्षत, यम, गन्धर्व, भृङ्गराज, मृग, पितर, दौवारिक, सुग्रीव, पुष्पदन्त, वरुण, असुर, शेष, राजयक्ष्मा रोग, अहि, मुख्य, भल्लाटक, सोम, सर्प, अदिति, दिति, ये चारों ही किनारों के देवता कहे गए हैं। ईशान, अग्नि, नैऋत्य एवं वायु कोण के देवों के समीप क्रमशः आप, सावित्र, जय तथा रुद्र के पद होते हैं।

ब्रह्मा के चारों ओर पूर्व आदि आठों दिशाओं में क्रमशः अर्थमा, सविता, विवस्वान्, विबुधाधिप, मित्र, राजयक्ष्मा, पृथ्वीधर, आपवत्स हैं और मध्य के नवपदों में ब्रह्मा को स्थापित किया जाना चाहिए। इस प्रकार सभी पदों में उक्त पैंतालीस देवताओं को स्थापित कर पूजन करना चाहिए। जैसे कि ईशान कोण में आप, आपवत्स, पर्जन्य, अग्नि और दिति ये पाँच देव एक पद होते हैं, उसी प्रकार अन्य कोणों के पाँच-पाँच देवता भी एक पद के भागी होते हैं। अन्य जो बाह्य पंक्ति के (जयन्त, इन्द्रादि) 20 देवता हैं, वे सब द्विपद दो-दो पदों के भागी होते हैं तथा ब्रह्मा से पूर्व, दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर दिशा में अर्यमा, विवस्वान्, मित्र एवं पृथ्वीधर ये चार देवता हैं, वे त्रिपद या तीन-तीन पदों के भागी होते हैं। इनकी तदनुसार ही स्थापना कर पूजा करनी चाहिए।

वास्तुज्ञो वास्तुमन्त्रेण गन्धपुष्पाक्षतादिभिः।

प्रणवेनार्चयेद्वापि अथवा स्वस्वनामभिः॥ 22 ॥

वास्तुकारों को चाहिए कि वे ब्रह्मादि सहित एक पद, द्विपद तथा त्रिपद देवताओं का वास्तुमन्त्रों के साथ ही गन्ध, पुष्प, अक्षतादि के साथ प्रणय या ॐ के साथ उन-उन देवताओं के नामानुसार पूजा निवेदित करें।

शुक्लवस्त्रयुगं दद्याद् धूपदीपफलैः सह।

अपूपैर्भूरि नैवेद्यैर्वाद्यैः सह समर्पयेत् ॥23॥

देवताओं के आवाहनादि सहित धूप, दीप, फल के साथ-साथ दो शुक्लवस्त्रों को समर्पित करें। उन्हें अपूप या पूआ का नैवेद्य प्रदान करें और इस अवसर पर वाद्यों का वादन करें।

ताम्बूलं च ततो दद्याद्देवेभ्य पृथक्पृथक्।

दत्त्वा पुष्पाञ्जलिं कर्ता प्रार्थयेद्वास्तुपुरुषम् ॥24॥

विप्रेभ्यो भोजनं दत्त्वा स्वयं भुञ्जीत बन्धुभिः।

देवताओं को पृथक् पृथक् रूप से अन्त में ताम्बूल, पान सोपारी प्रदान करें और पुष्पाञ्जलि के साथ वास्तुपुरुष की प्रार्थना करें। गृहस्वामी को चाहिये कि वह इस अवसर पर ब्राह्मणों को भोजन कराने के उपरान्त स्वयं भी बन्धुजनों के साथ भोजन ग्रहण करें।

नमस्ते वास्तुपुरुष भूशय्यानिरत प्रभो ॥25॥

मद्गृहे धनधान्यादिसमृद्धिं कुरु सर्वदा।

प्रार्थना

वास्तुपुरुष की प्रार्थना इस प्रकार करनी चाहिए' भूमि शय्या पर शयन करने वाले वास्तुपुरुष! आपको मेरा नमस्कार है। प्रभो! आप मेरे आवास को धन- धान्यादि से सम्पन्न कीजिए।'

इति प्रार्थ्य ततो दद्याद्दक्षिणामर्चकाय च ॥ 26 ॥

एवं यः कुरुते सम्यग्वास्तुपूजां प्रयत्नतः।

आरोग्यं पुत्रपौत्रादि धनधान्यं लभेन्नरः॥ 27॥

इस प्रकार प्रार्थनादि कृत्यों के उपरान्त देवता के समक्ष पूजादि करवाने वाले पुरोहित को सम्मान सहित दक्षिणा प्रदान करना चाहिए। जो कोई इस प्रकार सम्यक् रूप से, प्रयत्नपूर्वक वास्तुपूजा करता है, वह आरोग्य, पुत्र, पौत्र, धन- धान्य प्राप्त करता हुआ सुखी होता है।

वास्तुपूजामकृत्वा यः प्रविशेन्नवमन्दिरे।

रोगान्नानाविधान् क्लेशानश्नुते सर्वसङ्कटान्॥ 28॥

जो व्यक्ति वास्तुपूजा न कर नए गृह में प्रवेश करता है, वह नाना तरह के रोग, क्लेश और सभी प्रकार के सङ्कटों को झेलता है। अतः सुख, आरोग्यादि के लिए वास्तुपूजन अवश्य करना चाहिए।

8.2. जीर्णोद्धार गृहनिर्माण एवं गृहप्रवेश-

जीर्णे गृहेऽग्न्यादिभयान्नवेऽपि मार्गोर्जयोः श्रवयकेऽपि सत्स्यात् ।

वेशोऽम्बुपेज्यानिलवासवेषु नावश्यमस्तादिविचारणाऽत्र ॥22॥ (बृहद्वातुमाला गृ.प्र.)

अग्नि आदि प्राकृतिक प्रकोप के कारण नष्ट भ्रष्ट गृह का यदि उसी स्थान पर पुनः निर्माण किया गया हो तो श्रावण, कार्तिक, मार्गशीर्ष मासों में स्वाती, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्रों में प्रवेश शुभ है।

इसमें ग्रहों के उदय-अस्त का विचार न करें अर्थात् पञ्चाङ्ग शुद्धि के द्वारा गृहप्रवेश कर लेना चाहिए। तृण द्वारा निर्मित गृह में कभी भी शुभ दिन-वार में प्रवेश किया जा सकता है। यथा-

विशेत्सौमायने हर्म्ये तृणागारे तु सर्वदा।। (बृहद्वातुमाला गृ.प्र. 6)

8.3. गृहप्रवेश मुहूर्त्तविधान –

मतान्तानुसार गृहप्रवेशनिर्देशः- नवीन गृह में प्रवेश उत्तरायण में और यात्रानिवृत्ति पर राजा का गृहप्रवेश भी उत्तरायण में शुभ होता है, द्वन्द्वात्मक प्रवेश भी उत्तरायण में ही करना चाहिए। प्रथम दिन वास्तुपूजा और बलिदान कर माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ में गृहप्रवेश शुभ होता है यथा-

आदौ सौम्यायने कार्यं नववास्तुप्रवेशनम्।

राज्ञा यात्रानिवृत्तौ च यद्वा द्वन्द्वप्रवेशनम् ॥

विधाय पूर्वदिवसे वास्तुपूजां बलिक्रियाम् ।

माघ-फाल्गुन-वैशाख-ज्येष्ठमासेषु शोभनः॥ (बृहद्वातुमाला गृ.प्र.3-4)

कार्तिक, मार्गशीर्ष मास में गृहप्रवेश मध्यम होता है। गृहारम्भ के वर्णित नक्षत्र तथा वार के समय सूर्य उत्तरायण में हो तो ईंट, पत्थर, मिट्टी के गृह में प्रवेश करना शुभ होता है।

प्रवेशो मध्यमो ज्ञेयः सौम्यकार्तिकमासयोः।

प्रवेशे निर्णयः प्रोक्तः शास्त्रज्ञैः पूर्वसूरिभिः ॥5॥

गृहारम्भोदिते मासे धिष्ण्ये वारे विशेद् गृहम्। (बृहद्वातुमाला गृ.प्र.5)

गृहारम्भ में विशेषविचारः

क्रूरग्रहाधिष्ठितविद्धभं च विवर्जनीयं त्रिविधप्रवेशे।

शुक्ले च पक्षे सुतरां प्रवृद्ध्यै कृष्णे च तावद्दशमीं च यावत् ॥

चित्रोत्तराधातृशशाङ्कमित्रवस्वन्त्यवारीश्वरभेषु नूनम्।

आयुर्धनारोग्यसुपुत्रपौत्रसुकीर्तिदः स्यात्त्रिविधः प्रवेशः ॥ (बृहद्वातुमाला गृ.प्र.7-8)

जिस नक्षत्र पर पापग्रह हों और जो नक्षत्र पापग्रहों से विद्ध हों, ये सब उपर्युक्त त्रिविध प्रवेश में त्याग देने चाहिए। सदैव वृद्धि हेतु शुक्ल पक्ष में प्रवेश श्रेष्ठ हैं। यदि कृष्ण पक्ष में करना हो तो दशमी तिथि

के तक ही प्रवेश करें। चित्रा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, अनुराधा, धनिष्ठा, रेवती, शतभिषा नक्षत्रों में तीनों प्रकार का प्रवेश करने से धन, आयु, आरोग्य, पुत्र, पौत्र और कीर्ति में वृद्धि होती हैं।

शुभयोगनिर्देश-

पौष्णे धनिष्ठास्वथ वारुणेषु स्वायम्भुवक्षेषु त्रिषूत्तरासु।

अक्षीणचन्द्रे शुभवासरे च तिथावरिक्ते च गृहप्रवेशः ॥ (बृहद्वातुमाला गृ.प्र.9)

गृहारम्भ के शुभ योग-रेवती, धनिष्ठा, शतभिषा, रोहिणीं, तीनों उत्तरा ये नक्षत्र हों एवं चन्द्रमा क्षीण न हो तथा रिक्ता को छोड़कर अन्य तिथियों में गृहप्रवेश शुभ होता है।

शुभः प्रवेशो देवेज्यशुक्रयोर्दृश्यमानयोः।

व्यर्कारवारतिथिषु रिक्तामावर्जितषु च॥

वस्त्वोज्यान्त्येन्दुवरुणत्वाष्ट्रमित्रस्थिरोडुषु

दिवा वा यदि वा रात्रौ प्रवेशो मङ्गलप्रदः ॥ (बृहद्वातुमाला गृ.प्र.10-11)

बृहस्पति एव शुक्र उदय होने पर, रविवार, मंगलवार एवं रिक्ता तिथियों के अतिरिक्त धनिष्ठा, पुष्य, रेवती, मृगशिरा, शतभिषा, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा नक्षत्रों में दिन अथवा रात्रि में गृहप्रवेश शुभ होता है।

गृहप्रवेश में लग्नविचार-

मेषे यानं घटे व्याधिर्धान्यहानिर्मृगे गृहम्।

विशतां कर्कटे नाशः शेषलग्नेषु शोभनम्॥

निन्दिता अपि शुभांशसमेतास्तौलिमेषमकराः सकुलीराः।

कर्तुरौपचयगाश्च विलग्ने राशयः शुभफलाश्च भवन्ति॥ (बृहद्वातुमाला गृ.प्र.12-13)

मेष लग्न के गृहप्रवेश में सुखपूर्वक यात्रा, कुम्भ लग्न में व्याधि, मकर में धान्य हानि, कर्क में नाश-तथा अन्य लग्नों में शुभ होता है।

निन्दित लग्न भी शुभ नवांशक से युक्त हों अथवा तुला, मेष, मकर, कर्क- ये राशियाँ भी यदि गृहपति की राशि से उपचय होकर लग्न में हों तो प्रवेश शुभ होता है।

लल्ल के अनुसार लग्नविचार -

व्याधिहा धनहा चैव वित्तदो बन्धुनाशकृत्।

पुत्रहा शत्रुहा स्त्रीघ्नः प्राणहा पिटकप्रदः॥14॥

सिद्धिदो धनदश्चैव भवेत्तज्जन्मराशिगः।

लग्नस्थः क्रमशो राशिर्जन्मलग्नात् प्रवेशने ॥15॥

यदि जन्म की राशि प्रवेश लग्न की हो तो व्याधिनाश, दूसरी हो तो धन नष्ट, तीसरी धनद, चौथी बन्धु नाश, पाँचवी पुत्रहानि, छठी शत्रुनाश, सातवीं स्त्री नाश, आठवीं प्राणनाश, नवीं फोड़ा फुन्सी की अधिकता, दशवीं कार्यसिद्धि, ग्यारहवीं धनलाभ एवं बारहवीं अशुभ।

रामदैवज्ञ के अनुसार लग्न विचार-

त्रिकोणकेन्द्रायधनत्रिगैः शुभैर्लग्नात्त्रिषष्ठायगतैश्च पापकैः।

शुद्धाम्बुरन्ध्रे विजनुर्भमृत्यौ व्यर्कारिक्ताचरचैत्रदर्शे ॥16॥

लग्न से त्रिकोण (3.9) केन्द्र (1.4.7.10) तथा दूसरे, तीसरे शुभ ग्रहों (3.6.11) में पाप ग्रह हों 4।8 स्थान पर शुद्ध ग्रह हों एवं जन्मराशि अथवा लग्न से अष्टम लग्न न हों, रवि, मंगलवार रिक्ता तिथि चर लग्न चैत्र मास और अमावास्या तिथि को छोड़कर गृहप्रवेश शुभ है।

नैरुज्यदारिद्र्य विभूतिकारी बन्ध्वात्मजद्वेषि।

प्राणापहारी कलहप्रदश्च सिध्यर्थदौ भीतिकरः क्रमेण ॥(गृहवास्तु प्रदीप 94)

जन्मलग्न की प्रथम राशि में गृहप्रवेश करने पर आरोग्य, दूसरी में दरिद्रता, तीसरी में सम्पदा, चौथी में बन्धुघात, पाँचवीं में पुत्रनाश, छठीं में पुत्रनाश, सातवीं में पत्नीनाश, आठवीं में गृहस्वामी के प्राणों की हानि, नवीं में कलह, दसवीं में सिद्धि, ग्यारहवीं में अर्थलाभ एवं बारहवीं राशि में भय होता है।

राशिर्लग्नतो जन्मराशेर्जन्मोदयात्तथा ।

कीर्तितो मुनिभिर्वेश्मप्रवेशो शौनकादिभिः ॥(गृहवास्तु प्रदीप 95)

गृह निर्माण करनेवाले की जन्मलग्न एवं जन्मराशि गृहप्रवेश समय में प्रवेश लग्नगत हो तो गृह-प्रवेश शुभ होता है, ऐसा शौनक आदि मुनियों का मत है।

द्वीशेऽनले दारुणभे तथोत्रे भे स्त्रीगृहपुत्रात्मविनाशनं स्यात्।

मेषकुलीरे मकरे तुलाधरे न चैत्रे रिक्तारनिशामलिम्लुचे ॥ (गृहवास्तुप्रदीप गृ.प्र.97)

गृहप्रवेश विशाखा नक्षत्र में करने पर स्त्री; कृत्तिका नक्षत्र में प्रवेश करने पर गृह , आर्द्रा, श्लेषा, ज्येष्ठा या मूल नक्षत्र में प्रवेश करने पर पुत्र का; भरणी, तीनों पूर्वा या मघा नक्षत्र में प्रवेश करने पर गृहस्वामी का विनाश होता है।

मेष, कर्क, मकर एवं तुलालग्न में, चैत्र मास में, रिक्ता तिथि (4।9।14), मंगलवार, रात्रि एवं अधिक मास में गृहप्रवेश शुभ नहीं है।

वसिष्ठ के अनुसार-

कृत्वा शुक्रं पृष्ठतो वामतोऽर्के विप्रान्पूज्यानप्रतो पूर्णकुम्भान्।

रम्यं हर्म्यै तोरणं स्रग्वितानैः सम्यक्स्त्रीभिर्गीतवाद्यैर्विशेचत् ॥17॥

शुक्र को पृष्ठ भाग में और सूर्य को वाम भाग में होने पर ब्राह्मणों की पूजा के उपरान्त पूर्ण कलश को आगे कर घर को तोरण, वन्दनवार, माला, वितान आदि उपकरणों से सम्यक् सुशोभित कर स्त्रियों के मंगल गीतों व विविध वाद्यों के शब्दों को सुनते हुए गृह प्रवेश करना उत्तम होता है।

रामदैवज्ञ के अनुसार वाम रवि विचार

वामोरविर्मृत्युसुतार्थलाभतोऽर्के पञ्चमे प्राग्वदनादिमन्दिरे।

पूर्णातिथौ प्राग्वदने गृहे शुभो नन्दादिके याम्यजलोत्तरानने॥18॥

पूर्वाभिमुख गृह में प्रवेश करने पर प्रवेश लग्न के अष्टम स्थान से पाँच राशि तक, दक्षिण मुख गृह के लिए पञ्चम स्थान की राशि से पाँच राशि तक, पश्चिमाभिमुख गृह हेतु द्वितीय स्थान की राशि से पाँचवीं राशि तक और उत्तराभिमुख गृह के लिए एकादश स्थान की राशि से पाँच राशि तक सूर्य हों तो वाम रवि समझें। अर्थात् 1,8,5,2,11 वें भाव में सूर्य हो तो पूर्वादि दिशाओं में गृहप्रवेश करने पर सूर्य वाम होते हैं। वाम रवि के होने पर पूर्वादि दिशा के द्वार में प्रवेश से मृत्यु, सुत, अर्थ और लाभ होता है।

पूर्णा (5।10।15) तिथि में पूर्वमुख गृह में नन्दा तिथि (1।6।11) में दक्षिणाभिमुख गृह में, भद्रा तिथि (2।7।12) में पश्चिमाभिमुख गृह में, और जया तिथि (3।8।13) में उत्तराभिमुख गृह में प्रवेश शुभ होता है।

गृहप्रवेश में कुम्भचक्र-

वक्रे भूरविभात्प्रवेशसमये कुम्भेऽग्निदाहः कृताः

प्राच्यामुद्वसनं कृतायमगताः लाभः कृताः पश्चिमे ।

श्रीर्वेदाः कलिरुत्तरे युगमिता गर्ने विनाशो गुदे

रामाः स्थैर्यमतः स्थिरत्वमनला कण्ठे भवेत्सर्वदा ॥19॥

गृहप्रवेश के समय कुम्भचक्र निर्माण कर उसके अनुसार शुभाशुभ का निर्णय करके गृहप्रवेश करना चाहिए। सूर्य के नक्षत्र से कलशचक्र के मुख में 1 नक्षत्र, इसमें प्रवेश करने से अग्निदाह, इसके पूर्व में 4 नक्षत्र- उद्वास, इससे गृहपति का परदेश, 4 नक्षत्र दक्षिण में लाभ, 4 नक्षत्र पश्चिम में लक्ष्मी प्राप्ति, 4 नक्षत्र उत्तर में कलह, 4 नक्षत्र गर्भ (मध्य) में गर्भनाश, 3 नक्षत्र गुद में स्थिरता और 3 नक्षत्र कण्ठ में सदैव स्थिरता होती है।

सूर्यर्क्षतस्त्रिभगे च चन्द्रे सूर्यार्कज्ञशुक्रार्किशशाङ्कनामा।

गुर्वगुकेतवस्त्वनेष्टाहुती तदग्रतौ क्रूरखगाकितास्ये ॥ (गृहवास्तुप्रदीप गृ. प्र. 99)

सूर्य के नक्षत्र से चन्द्र तक के नक्षत्रों में 3 नक्षत्र सूर्य के, 3 बुध के, 3 शुक्र के, 3 शनि के एवं 3 चन्द्रमा के होते हैं। पुनः 3 नक्षत्र मङ्गल, 3 बृहस्पति, 3 राहु और 3 केतु के होते हैं, इनमें गृहप्रवेश न करें।

गृहप्रवेश में ध्यातव्य-

अकपाटमनाच्छन्नमदत्तबलि भोजनम

गृहं न प्रविशेदेवं विपदामाकरं हि तत् ॥20॥

दरवाजा रहित, विना छतवाला, बिना बलिदान तथा विना ब्राह्मणभोज तथा सम्बन्धियों के गृह में प्रवेश करने पर गृह में विपत्तियाँ प्रवेश कर जाती है।

गृहप्रवेश में गृहपतिकर्तव्य-

एवं सुलग्ने स्वगृहं प्रविश्य वितानपुष्पश्रुतिघोषयुक्तम्।

शिल्पज्ञ-दैवज्ञ-विधिज्ञ-पौरान् राजार्चयेदभूमिहिरण्यवस्त्रैः ॥29॥

उपर्युक्त विधि के अनुसार शुभ लग्न में चंदोवा (छाता) लगाकर फूल-मालाओं से सुसज्जित, वेदध्वनि से युक्त अपने गृह में प्रवेश करे, तदनन्तर राजा शिल्पज्ञ दैवज्ञ, पुरोहित तथा पुरवासियों को भूमि, सुवर्ण, वस्त्र आदि उपहारस्वरूप में प्रदान करने चाहिए।

वृत्तशत के अनुसार यात्रानिवृत्ति पर राजा के गृहप्रवेश का विचार-

भूपानां मृदुभिर्ध्रुवैः प्रविशनं यात्रानिवृत्तौ शुभं

स्याद् भूयो गमनं चरर्क्षलघुभै रुद्रैर्मृतिर्भूपतेः।

तीक्ष्णैर्भूपकुमारकस्य नृपतेः पत्न्या विशाखाह्वये

धिष्ण्ये हव्यभुजो गृहं प्रविशतां संदह्यते वह्निना॥23॥

राजा को यात्रा समाप्त होने पर, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, नक्षत्रों में पुनः गृहप्रवेश करें तो शुभ रहता है। इसके पश्चाद् स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, अश्विनी, पुष्य और आर्द्रा नक्षत्रों में प्रवेश करने से मृत्यु; मूल, ज्येष्ठा, आश्लेषा नक्षत्रों में प्रवेश करने पर राजकुमार की मृत्यु, विशाखा नक्षत्र में प्रवेश करने पर राजपत्नी की मृत्यु और कृत्तिका में प्रवेश करने से अग्निभय होता है।

वास्तुप्रदीप के अनुसार गृहप्रवेशविचार-

वैशाखमासेऽपि च फाल्गुनेऽपि ज्येष्ठे प्रवेशः शुभदो गृहस्य।

यात्रानिवृत्तावथवा नवस्य भूमीभुजां द्विर्भवनस्थिरेषु ॥24॥

वास्तुप्रदीप के अनुसार गृहप्रवेश का विचार- फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ मास में द्विस्वभाव अथवा स्थिर लग्नों में यात्रा के समाप्त होने पर अथवा नवीन गृह में प्रवेश शुभ होता है।

8.4. **वास्तुशान्ति परिचय-** वर्तमान में भूमि के अभाव और कुशल वास्तुशिल्पियों के अभाव के कारण सामान्यतया कुछ वास्तु दोष रह सकते हैं, उनके निवारण के लिए पूर्वाचार्यों नें वास्तुशान्ति विधान की व्यवस्था व्यवस्था की है। विश्वकर्माप्रकाश के अनुसार भूमिदोष एवं भवनदोष वैदिक अनुष्ठान के करने से समाप्त हो जाते हैं।

प्रयोगारम्भ, स्वस्तिवाचन, गणपतिपूजन, सङ्कल्पः, श्रीगणपतिपूजन, कलशस्थापन एवं पूजन, पुण्याहवाचन, अभिषेक, षोडशमातृकापूजन, वसोर्धारापूजन, आयुष्यमन्त्रजप, नान्दीश्राद्ध, योगिनीपूजन, क्षेत्रपालपूजन, अग्निस्थापन, नवग्रहस्थापन एवं पूजन, वास्तुमण्डल देवता स्थापन एनं पूजन, ग्रह हवन, वास्तु देवता होम, बलिदान, पूर्णाहुति, त्रिसूत्रीवेष्टन, जलदुग्धधारा और

ध्वजा-पताका स्थापन, गर्तविधि, वास्तुपुरुषप्रार्थना, दक्षिणा, सङ्कल्प, ब्राह्मण भोजन, उत्तरपूजन, अभिषेक, छायापात्र दान, विसर्जन, आशीषादि।

सन्दर्भग्रन्थसूची

1. भारतीय वास्तुशास्त्र, डॉ. रघुनाथ पुरुषोत्तम कुलकर्णी श्रीमध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति 11 रविन्द्रनाथ टैगोर मार्ग इन्दौर वृहद् वास्तुमाला
2. भारतीय स्थापत्य एवं कला प्रो. उदयनारायण मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी
3. मयमत टीकाकार शैलजा पाण्डे चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला वाराणसी
4. मनुष्यालयचन्द्रिका, शैलजा पाण्डे, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
5. वास्तुमण्डन, पं, श्रीकृष्ण जुगुनु, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
6. शिल्परत्नम्,(1-4) पं, श्रीकृष्ण जुगुनु, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
7. वास्तुशास्त्रविमर्श, डॉ. चन्द्रमोहन झा, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
8. वास्तुशास्त्रसार, स्वामी प्रखर प्रज्ञानन्द सरस्वती, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
9. वास्तुमाणिक्य रत्नाकर पं. रामचन्द्र पाण्डेय, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
10. समरांगणसूत्रधार श्री कृष्ण जुगुनु चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला वाराणसी
11. बृहत्सहिता, डॉ. अच्युतानन्द झा, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
12. मुहूर्त्तचिन्तामणी रामदैवज्ञ,(पियूषधारा) विघ्नेश्वरी प्रसाद, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

राष्ट्रीय आदर्श वेद विद्यालयों
वेद पाठशालाएँ तथा गुरु-शिष्य परम्परा इकाइयाँ

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

Vedavidya Marg, Chintaman Ganesh, Post. Jawasia, Ujjain 456006 (M.P.)

दूरभाष/Phone : (0734) 2502255, 2502254

E-mail : msrvvpujn@gmail.com, Website - www.msrvvp.ac.in